ISSN-2321-3981

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

देवपुत्र

मार्गशीर्ष २०८२ दिसम्बर २०२५

संघ परिचय अंक

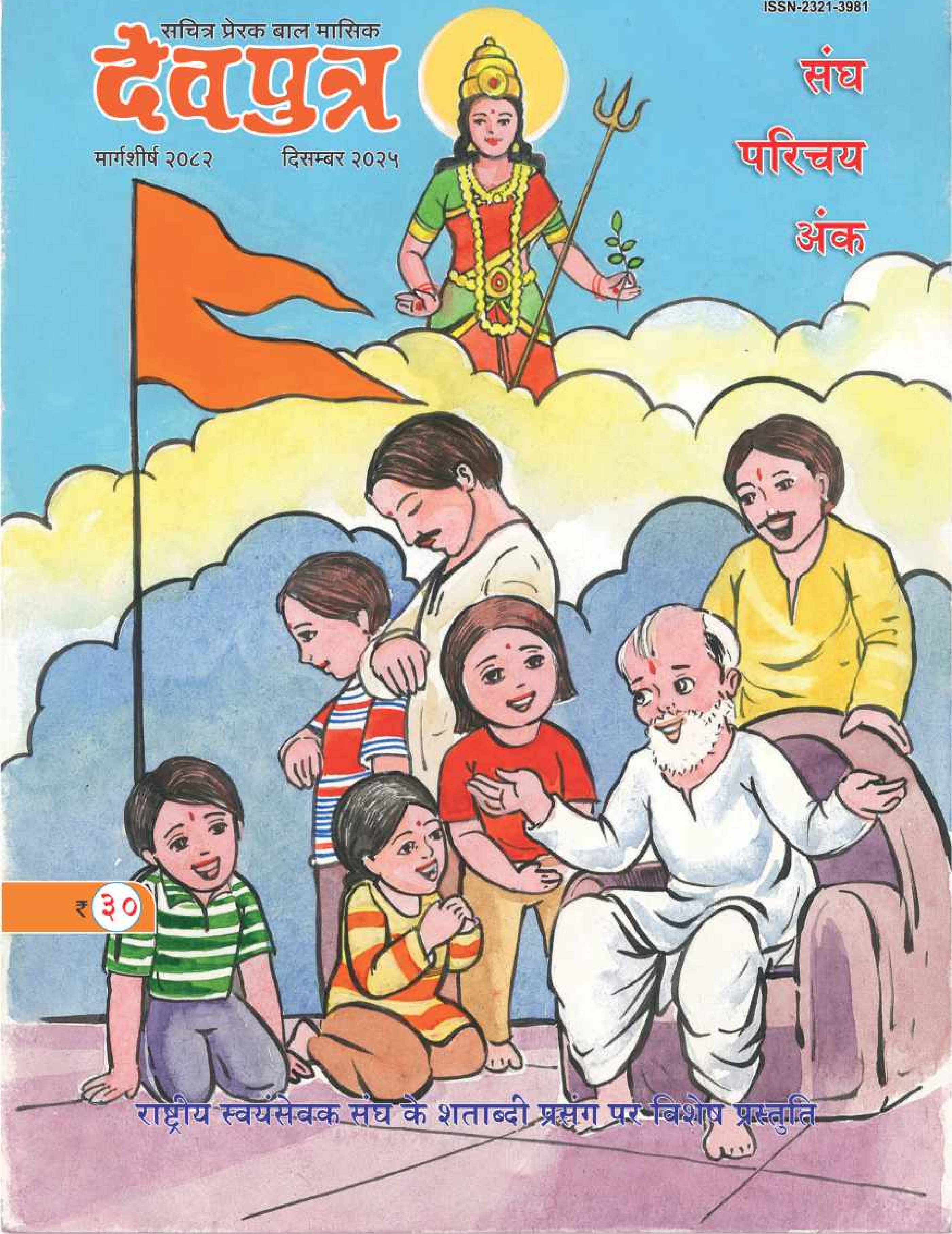

₹ ३०

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के शताब्दी प्रसंग पर विशेष प्रस्तुति

शाखा पर होने वाली नित्य प्रार्थना

नमस्ते सदा वत्सले मातृभूमे
त्वया हिन्दुभूमे सुखं वर्धितोऽहम्।
महामङ्गले पुण्यभूमे त्वदर्थे
पतत्वेष कायो नमस्ते नमस्ते।।१।।
प्रभो शक्तिमन् हिन्दुराष्ट्राङ्गभूता
इमे सादरं त्वां नमामो वयं
त्वदीयाय कार्याय बद्धा कटीयं
शुभामाशिषं देहि तत्पूर्तये।
अजय्यां च विश्वस्य देहीश शक्तिं
सुशीलं जगद्येन नम्रं भवेत्
श्रुतं चैव यत् कण्टकाकीर्णमार्गं
स्वयं स्वीकृतं नः सुगं कारयेत्।।२।।
समुत्कर्षनिःश्रेयसस्यैकमुग्रं
परं साधनं नाम वीरव्रतं
तदन्तः स्फुरत्वक्षया ध्येयनिष्ठा
हृदन्तः प्रजागर्तु तीव्राऽनिशम्।
विजेत्री च नः संहता कार्यशक्तिर्
विधायास्य धर्मस्य संरक्षणं
परं वैभवं नेतुमेतत् स्वराष्ट्रं
समर्था भवत्वाशिषा ते भृशम्।।३।।
।।भारत–माता की जय।।

हे वत्सल मातृभूमि! मैं तुझे निरन्तर प्रणाम करता हूँ। हे हिन्दुभूमि! तूने ही मुझे सुख में बढ़ाया है। हे महामङ्गलमय पुण्यभूमि! तेरे ही कारण मेरी यह काया अर्पित हो। तुझे मैं अनन्त बार प्रणाम करता हूँ।

हे सर्वशक्तिमान् परमेश्वर! ये हम हिन्दुराष्ट्र के अङ्गभूत घटक, तुझे आदरपूर्वक प्रणाम करते हैं। तेरे ही कार्य के लिए हमने अपनी कमर कसी है। उसकी पूर्ति के लिए हमें शुभ आशीर्वाद दे। विश्व के लिए अजेय ऐसी शक्ति, सारा जगत् विनम्र हो ऐसा विशुद्ध शील तथा बुद्धिपूर्वक स्वीकृत हमारे कण्टमय मार्ग को सुगम करे, ऐसा ज्ञान भी, हमें दे।

अभ्युदयसहित निःश्रेयस् की प्राप्ति का वीरव्रत नामक जो एकमेव श्रेष्ठ उग्र साधन है, उसका हम लोगों के अन्तःकरण में स्फुरण हो। हमारे हृदय में अक्षय तथा तीव्र ध्येयनिष्ठा सदैव जागृत रहे। तेरे आशीर्वाद से हमारी विजयशालिनी संगठित कार्य–शक्ति, स्वधर्म का रक्षण कर अपने इस राष्ट्र को परम वैभव की स्थिति पर ले जाने में अतीव समर्थ हो।

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

देवपुत्र

(विद्या भारती से सम्बद्ध)

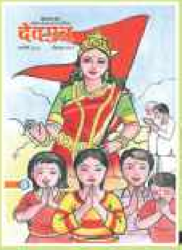

मार्गशीर्ष २०८२	▪	वर्ष	४६
दिसम्बर २०२५	▪	अंक	६

संपादक

गोपाल माहेश्वरी

प्रबंध संपादक

नारायण चौहान

मूल्य

एक अंक	:	३० रुपये
वार्षिक	:	२५० रुपये
पन्द्रहवर्षीय	:	२५०० रुपये
सामूहिक वार्षिक	:	१८० रुपये

(कम से कम १० अंक लेने पर)

कृपया शुल्क भेजते समय चेक/ड्राफ्ट पर केवल 'सरस्वती बाल कल्याण न्यास' लिखें।

संपर्क

४०, संवाद नगर,
इन्दौर ४५२००१ (म. प्र.)
दूरध्वनि: (०७३१) २४००४३९

स्वामी सरस्वती बाल कल्याण न्यास, इन्दौर, म. प्र. के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक राकेश भावसार द्वारा अजीत प्रिन्टर्स एंड पब्लिशर्स, २०-२१, प्रेस कॉम्प्लेक्स, ए. बी. रोड, इन्दौर, म. प्र. से मुद्रित एवं ४०, संवाद नगर, नवलखा, इन्दौर, म. प्र. से प्रकाशित।

e-mail:
व्यवस्था विभाग
devputraindore@gmail.com
संपादन विभाग
editordevputra@gmail.com

अपनी बात

प्यारे भैया–बहिनो!

अब से लगभग एक सौ वर्ष पहले यानी वर्ष १९२५ की विजयादशमी को भारत में एक ऐसे संगठन का आरंभ हुआ। जिसका एकमात्र लक्ष्य अपने इस सनातन और महान हिन्दूराष्ट्र को परमवैभव के शिखर पर ले जाना यानी जग का सिरमोर बनाना था।

इस संगठन की संकल्पना करने वाले डॉक्टर केशवराव बलिराम हेडगेवार जी भली–भाँति जानते थे कि यह राष्ट्र सदैव ही जीवन के समस्त श्रेष्ठ आदर्शों का प्रवर्तक और विश्व को उसकी शिक्षा देकर उचित जीवन–पद्धति का मार्ग दिखाने वाला रहा है। इसी से इसे विश्वगुरु का सम्मान प्राप्त हुआ।

इस विचार से डॉक्टर जी ने एक ऐसे संगठन को साकार किया जिसका काम उपरोक्त महान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पूर्ण समर्थ और निस्वार्थ भाव से समर्पित कार्यकर्ता निर्माण हो सके। वे अपने समय के विभिन्न राजनैतिक और सामाजिक संस्थाओं व संगठनों की रीति–नीति का वर्षों अध्ययन करके इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे। वे चाहते थे कि राष्ट्रसेवा के लिए सतत् समर्पित भाव से नित्य तैयार रहने वाले, स्वयं की इच्छा से समाज को संगठित करने के पवित्र और निस्वार्थ कार्य में जुटे रहने वाले स्वदेशभक्तों की समर्थ परंपरा सदैव चलती रहे।

इसी अचल निष्ठा और अटल संकल्प के साथ कुछ स्वयंसेवकों के साथ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का शुभारंभ हुआ। आज एक शताब्दी पूर्ण करते हुए यह विश्व का सबसे बड़ा स्वयंसेवी संगठन है। इतना ही नहीं तो इससे प्रेरणा ग्रहण कर समाज जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में इसके स्वयंसेवकों ने स्वावलंबी संगठनों की रचना की और उनमें से अनेक अपने–अपने क्षेत्र में आज विश्व के सबसे बड़े संगठन हैं। शताब्दी प्रसंग पर इस निरंतर चलते और बढ़ते रहने वाले संगठन पर संपूर्ण विश्व का इसकी ओर विशेष ध्यानाकर्षण हुआ है।

स्वाभाविक रूप से राष्ट्र की भविष्य रूप नई पीढ़ी यानी आप बच्चों के मन में भी संघ विषयक कुछ जिज्ञासाएँ होंगी। इसलिए इस **संघ परिचय अंक** में इतने विराट संगठन का लघु परिचय आप सबके लिए प्रस्तुत है। संघ को और गहराई से समझना है तो उसके लिए संघ में स्वयं जुड़ना ही सर्वोत्तम और सरल उपाय है। भारत माता की जय।

आपका
बड़ा भैया

web site - www.devputra.com

।। अनुक्रमणिका ।।

- पूजा की तैयारी ०५
- भगवाध्वज के स्वागत में ०६
- संगठित शक्ति और पराक्रम का दिन ०७
- संचलन की अद्वितीय शोभा ०८
- उत्साह का उफनता ज्वार ०९
- भारत माता की जय जयकार १०
- महिमामय भगवाध्वज ११
- केशव संघ निर्माता १२
- राष्ट्रभक्त बालक केशव १३
- वन्देमातरम् कहना होगा १४
- संघ समझना है तो केशव चरित्र पढ़ो १५
- संघ बीज का अंकुरण १६
- मैं कहता हूँ यह हिन्दू राष्ट्र है १७
- संघ की लगन १८
- राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का अर्थ १९
- संघ में सर्वोच्च कौन ? २०
- सरसंघचालक जी २१
- संघ सँवरता गया, बढ़ता गया २२
- संघ में प्रार्थना २३
- नमस्ते सदा वत्सले मातृभूमे ! २४
- प्रचारक जी के साथ परिचय २५
- खूब जमी गोष्ठी २६
- गायक सब हैं गीतकार प्राय: अज्ञात २७
- साथ भोजन का आनंद २८
- हिन्दुभूमि की हम सन्तान २९
- संघ का सरल अर्थ ३०
- कठिन नहीं बहुत सरल है ३१
- संघ समझने का सरल तरीका शाखा ३२
- शाखा का आनंदलोक ३३
- सीख नहीं अनुभव ३४
- संघ प्रवेश का दिन ३५
- तुम शेर हो मेमने नहीं ३६
- शाखा यानी नित्य साधना ३७
- शाखा जाने का निश्चय ३८
- शरदोत्सव के माध्यम से ३९
- संघ का गुरुपूर्णिमा उत्सव ४०
- रक्षाबंधन, विजयादशमी, मकर संक्रांति ४१
- हिन्दू नववर्ष और हिन्दू साम्राज्य दिवस ४२
- परमपूजनीय डॉक्टर जी एवं श्री गुरुजी ४३
- हमारी सरसंघचालक परम्परा ४४
- मातृशक्ति के लिए ४५
- सेवा ही है धर्म हमारा ४६
- ज्योति से ज्योति जले ४७
- समाज अपना, देश हमारा ४८
- प्रकृति सबकी माँ है ४९
- राष्ट्राय स्वाहा ५०

आलेखन– गोपाल माहेश्वरी

चित्रांकन– पीयूष शर्मा

क्या आप देवपुत्र का शुल्क नेट बैंकिंग से जमा करा रहे हैं? तो कृपया ध्यान दें!

देवपुत्र का शुल्क इसकी प्रकाशन संस्था - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास** के खाते में ही जमा कराएँ। विवरण इस प्रकार है- खातेदार - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास** बैंक - **स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, एम.वाय.एच.परिसर शाखा, इन्दौर** खाता क्रमांक-**38979903189** **चालू खाता (Current Account) IFSC- SBIN0030359** राशि जमा करने के बाद जमा पर्ची को देवपुत्र के ई-मेल **ID devputraindore@gmail.com** पर अवश्य भेजिए। नेट बैंकिंग में प्रेषक के कॉलम में पहले अपना स्थान लिखें फिर **सरस्वती शिशु मंदिर** का संक्षेप लिखें तो सन्देश ठीक आता है। उदाहरण के लिए -सरस्वती शिशु मंदिर, संजीत मार्ग, मंदसौर ने देवपुत्र का शुल्क भेजा तो उन्हें प्रेषक में लिखना चाहिए - **''मन्दसौर संजीत मार्ग SSM''** आशा है सहयोग प्रदान करेंगे।

पूजा की तैयारी

आज दशहरा था। रावण दहन के लिए तो शाम को जाते हैं लेकिन दादा–दादी तो आज सुबह से ही आँगन में फूलों का ढेर लगाए उनकी पंखुड़ियाँ तोड़ रहे थे। धीरे–धीरे माँ, काकी और बाल मंडली यानी राघव, माधव, गोविंद, सुधा और चंद्रिका भी वहाँ आकर हाथ बँटाने लगे।

चंद्रिका सबसे छोटी थी उसने पूछा– ''दादाजी! इतने सारे फूल क्यों लाए हैं! इनका क्या करेंगे? कोई पूजा है आज?''

दादाजी मुस्कुराए– ''हाँ बेटी! आज सचमुच बहुत बड़ी पूजा है?''

''किसकी पूजा है?'' माधव से पूछे बिना रहा नहीं गया।

भगवाध्वज के स्वागत में

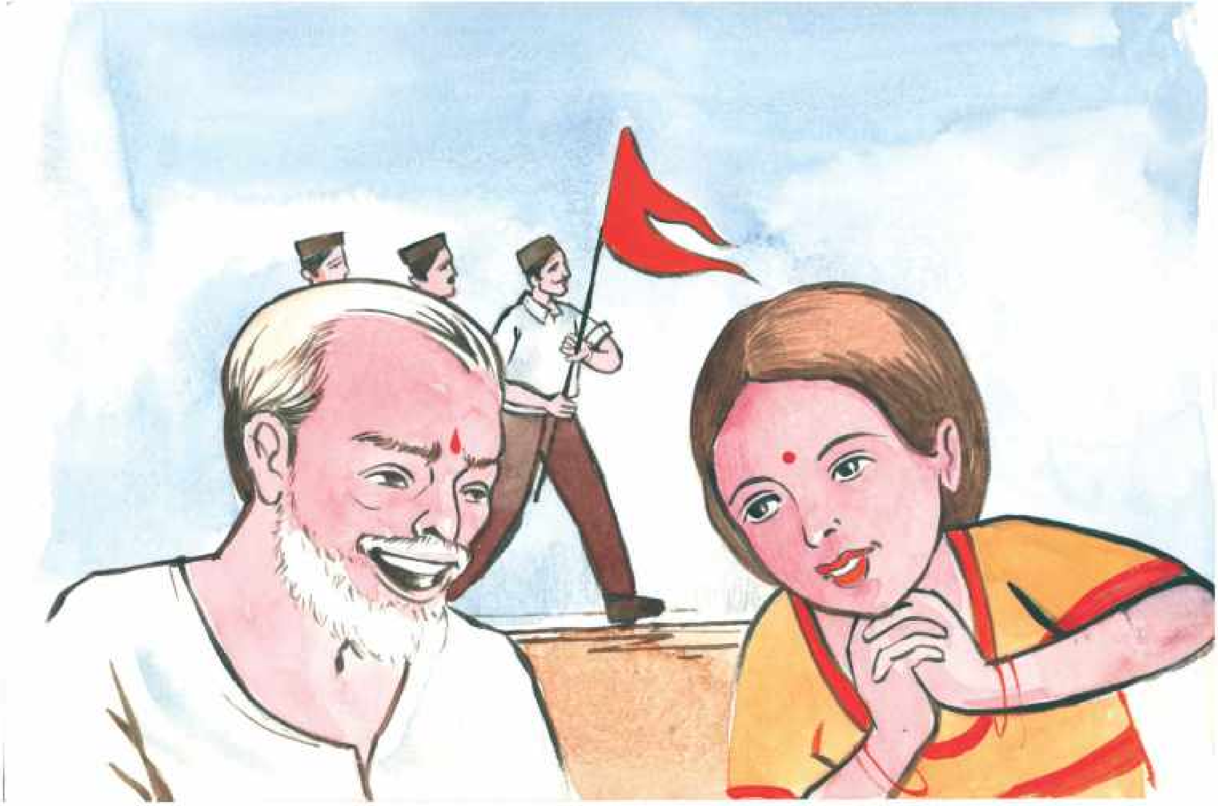

दादाजी बोले– ''अरे! भूल गए। आज विजयादशमी है। संघ का पथसंचलन निकलेगा ? तेरे पिताजी और काका भी तो गए हैं पर संचलन के लिए।''

''पर पूजा किसकी है ?'' गोविंद ने पूछा।

''तुमने 'पुष्प की अभिलाषा' कविता सुनी है न,

'मुझे तोड़ लेना वनमाली
उस पथ पर देना तुम फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने
जिस पथ जाएँ वीर अनेक।'

कवि ने यह बात देश पर मर मिट जाने वाले सैनिकों के लिए कही है लेकिन संघ कहता है **'देश के लिए जिएँ समाज के लिए जिएँ'** देश के लिए आवश्यक होने पर हमें प्राण भी दे देना चाहिए लेकिन अपना पूरा जीवन राष्ट्र की सेवा में लगा देना, यह भी बहुत बड़ी साधना है। जो ऐसी प्रेरणा जगाता है उस भगवा ध्वज का ही हम आज स्वागत करेंगे, पुष्पों से अर्चना करेंगे।''

संगठित शक्ति और पराक्रम का दिन

''दादाजी! क्या यह पथसंचलन विजयादशमी पर ही होता है?'' चंद्रिका ने जानना चाहा।

''ऐसा नहीं है कि पथसंचलन केवल विजयादशमी पर ही निकाला जा सकता है। लेकिन विजयादशमी के उपलक्ष्य में इसे निकालने की परंपरा बन गई है।'' दादाजी ने बताया।

गोविंद ने तपाक् से पूछा- ''विजयादशमी को ही क्यों?''

दादाजी को पता था यह प्रश्न पूछा ही जाएगा। वे मुस्कुराए- ''वैसे अधिकतर लोग यही जानते हैं कि विजयादशमी को डॉक्टर केशवराव बलिराम हेडगेवार जी ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ आरंभ किया था इसलिए संघ इस दिन पथ संचलन निकालता है लेकिन यह बात सही होते हुए भी कि २७ सितंबर १९२५ को संघ की स्थापना हुई थी पथ संचलन का मूल भाव संघ की वर्षगाँठ मनाना नहीं है। बल्कि विजयादशमी भगवान श्रीराम द्वारा वानर भालुओं की संगठित शक्ति से धर्म की रक्षा हेतु रावणवध का दिन है। यह संगठित शक्ति, शौर्य, पराक्रम और अनुशासन से देश धर्म की रक्षा के लिए विजय प्राप्त करने की परंपरा का प्रतीक पर्व है और इससे भी युगों पूर्व समस्त देवताओं ने अपनी शक्तियाँ संगठित कर भगवती दुर्गा को साकार किया था तब से यह सज्जन शक्तियों के संगठन से शक्ति के अजेय रूप के प्रकट होने का भी प्रतीक पर्व है।'' इसलिए इस दिन को संगठित शक्ति के प्रकटीकरण का विशेष अवसर मानकर संचलन निकाला जाता है।

संचलन की अद्वितीय शोभा

घोष की ध्वनि वातावरण में उत्साह भरते हुए पास आती जा रही थी। दादाजी ने कहा– ''चलो–चलो संचलन आ चुका है।''

पंक्तिबद्ध तरीके से घोष की ताल पर, कदम से कदम मिलाकर, दाहिने काँधे पर दण्ड लिए, बाँया हाथ कमर की सीध तक एक साथ हिलाते, स्वच्छ गणवेशधारी स्वयंसेवकों की लंबी पंक्तियों वाली छोटी–छोटी टुकड़ियाँ एक के बाद एक क्रमबद्ध चल रही थीं।

दादाजी ने बताया ये टुकड़ियाँ वाहिनियाँ कहलाती हैं। इन वाहिनियों के बीच–बीच में घोष वाहिनियाँ सबको आकर्षित कर रही थीं।

उत्साह का उफनता ज्वार

बच्चों का घोष के प्रति आकर्षण अनुभव कर दादाजी ने परिचय दिया– ''भारत में रणवाद्यों अर्थात् युद्ध क्षेत्र में बजाए जाने वाले बाजों की परंपरा बहुत पुरानी है। इनके स्वर और ताल सेनाओं में उत्साह भरने का काम करते रहे हैं। संघ का घोष उसी परंपरा का एक भाग है।''

राघव बोला– ''जैसे गणतंत्र दिवस परेड में मिलेट्री बैंड ?''

दादाजी ने कहा– ''हाँ! ऐसा ही समझ लो। वह जो बीच में बहुत बड़ा–सा वाद्य है, जिस पर दोनों ओर से लयबद्ध ठोके पड़ रहे हैं वह पणव है। और उससे छोटे–छोटे जो एक ओर ही दो डंडियों से बजाए जा रहे हैं, वे हैं आनक। इसके अलावा बाँसुरी दल है वह वेणुदल कहलाता है और धातु के बने बिगुल जैसे वाद्य शंख कहे जाते हैं।''

गोविन्द ने पूछा– ''और वह जो बड़ी–सी झाँझ जैसा है वह?'' दादाजी बोले वह है झल्लरी और वह त्रिकोण जैसा मुड़ा हुआ सरिए जैसा है वह त्रिकोण ही कहलाता हैं। सामान्य घोषदल में प्राय: इतने ही वाद्य होते हैं लेकिन संघ के घोष में विशेषदलों में शृंगवाद्य, नागांग आदि और भी वाद्य होते हैं।''

गोविन्द ने उत्साहित होकर पूछा– ''मैं भी घोष सीखूँगा।''

दादाजी बोले– ''हाँ–हाँ क्यों नहीं ? पर घोष वादन के लिए महीनों अभ्यास करना होता है तब ठीक प्रकार से रचनाएँ आती हैं।''

चंद्रिका ने पूछा– ''रचनाएँ ?''

''रचना माने धुनें। देखो वह घोष वाहिनी में सबसे आगे जो चल रहा है उस स्वयंसेवक को घोष प्रमुख कहते हैं। उसके हाथ में जो सुन्दर–सा दण्ड है, वह कहलाता है घोष दण्ड। उसी के संकेत पर पूरा घोष दल एक के बाद एक रचनाएँ बजाता है।

भारत माता की जय जयकार

मार्ग के दोनों ओर अनेक नागरिक, माता–बहनें बच्चे संचलन देखने उमड़े हुए थे। अचानक सबमें एक अत्यंत उत्साह की लहर उठी। भारतमाता की जय, वन्दे मातरम्, जय भवानी जय शिवाजी और जय–जय केशव जय–जय माधव जैसे गगनभेदी घोषों से वातावरण में रोमांच भर उठा। बच्चों को दादाजी ने सावधान किया– ''अच्छा! बाकी बातें फिर करेंगे। अभी सावधान हो जाओ देखो भगवाध्वज कितनी शान से आ रहा है।''

बच्चों ने देखा सचमुच खड्गधारी रक्षक दल के बीच भगवाध्वज पकड़े एक स्वयंसेवक बहुत अनुशासन से चल रहे थे। मार्ग के दोनों ओर खड़े दर्शक ध्वज पर पुष्प–वर्षा कर रहे थे।

दादाजी–दादाजी के साथ बच्चों ने भी पुष्प वर्षा की। ध्वज के पीछे भी कई वाहिनियाँ थीं।

महिमामय भगवाध्वज

अब तो बच्चों के मन में और भी जिज्ञासाएँ उछलने लगीं थीं। सब दादाजी को घेरकर बैठे थे।

राघव ने पूछा– ''दादाजी! सारे संचलन में सबसे प्रधान भगवाध्वज ही क्यों था?''

दादाजी ने पलभर श्रद्धा से नेत्र मूंदे और कहा– ''क्योंकि भगवाध्वज ही संघ का केन्द्रीय श्रद्धा बिन्दु है। संघ व्यक्ति पूजा को महत्व नहीं देता इसलिए संघ में तत्व और भारतीय सांस्कृतिक परंपरा का प्रतीक भगवाध्वज ही गुरुरूप में स्थापित है। इसके उगते सूर्य की किरणों, यज्ञ की ज्वालाओं और संन्यासियों के वस्त्रों जैसे रंग से हमें मातृभूमि के परम गौरव का बोध होता है। युगों से अनेक परम पराक्रमी महापुरुषों ने इस भगवाध्वज के तले अपना पराक्रम सिद्ध किया है।''

केशव संघ निर्माता

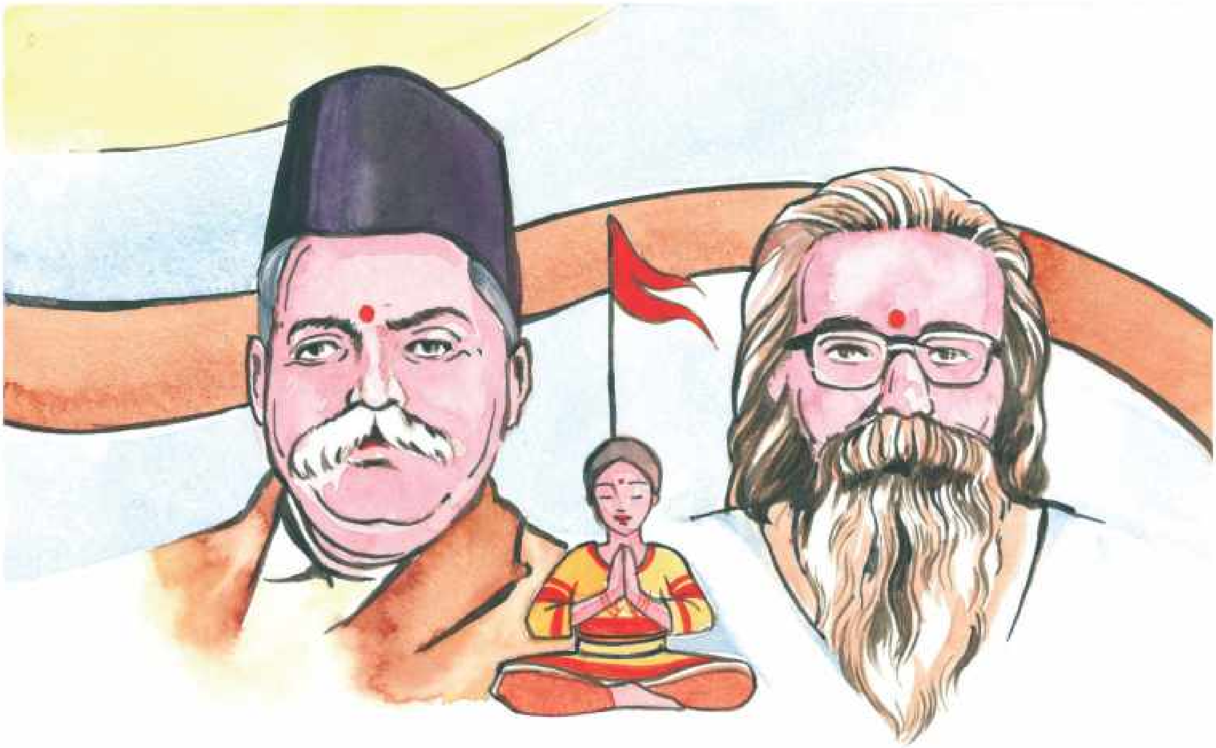

गोविन्द ने पूछा– ''दादाजी! अभी सब लोग घोष लगा रहे थे 'जय–जय केशव जय–जय माधव।' इसका क्या अर्थ है?''

दादाजी बच्चों की जिज्ञासा पर हँसे– ''ये केशव और माधव वे महापुरुष हैं जिनके प्रयत्नों से यह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ प्रारंभ हुआ। केशव यानी डॉक्टर केशवराव बलिराम हेडगेवार, संघ को साकार करने वाले। संघ जैसा संगठन राष्ट्र के लिए कितना आवश्यक है यह उन्होंने सौ वर्ष पहले ही जान लिया था।''

राघव ने कहा– ''हमें उनके बारे में थोड़ा और बताइए न दादाजी!''

''अवश्य–अवश्य मेरे पिताजी ने तो उनके दर्शन भी किए थे। डॉक्टर हेडगेवार जी वर्ष १८८९ में एक अप्रैल को महाराष्ट्र के नागपुर नगर में जन्मे थे। बचपन से ही बहुत दृढ़निश्चयी और मेधावी। राष्ट्रभक्ति तो उनमें इतनी दृढ़ थी कि लोग उन्हें जन्मजात देशभक्त कहते थे। विदेशी साम्राज्य के भारत पर अधिकार को वे असहनीय कलंक मानते थे। विद्यार्थी जीवन से ही उनके राष्ट्रीय स्वाभिमान के गुण प्रकट हो रहे थे।''

राष्ट्रभक्त बालक केशव

''मैं एक घटना जानता हूँ। पिताजी ने सुनाई थी। बताऊँ?'' माधव बड़ी देर में बोला।

''हाँ-हाँ हमें सुनना है।'' बच्चों ने सामुहिक जिज्ञासा दर्शाई।

माधव कहने लगा- ''जब केशव विद्यालय में पढ़ते थे। तभी इंग्लैंड की महारानी का साठवाँ जन्मदिन आया। वह २२ जून १८९७ का दिन था। शालाओं में मिठाई बाँटी गई। केशव ने यह कहते हुए मिठाई का दोना फेंक दिया कि हमारे देश को गुलाम बनाने वाली महारानी के जन्मदिन की खुशी हम क्यों मनाएँ?''

बच्चों को यह बात बहुत अच्छी लगी। सबने ताली बजाई।

वंदेमातरम् कहना होगा

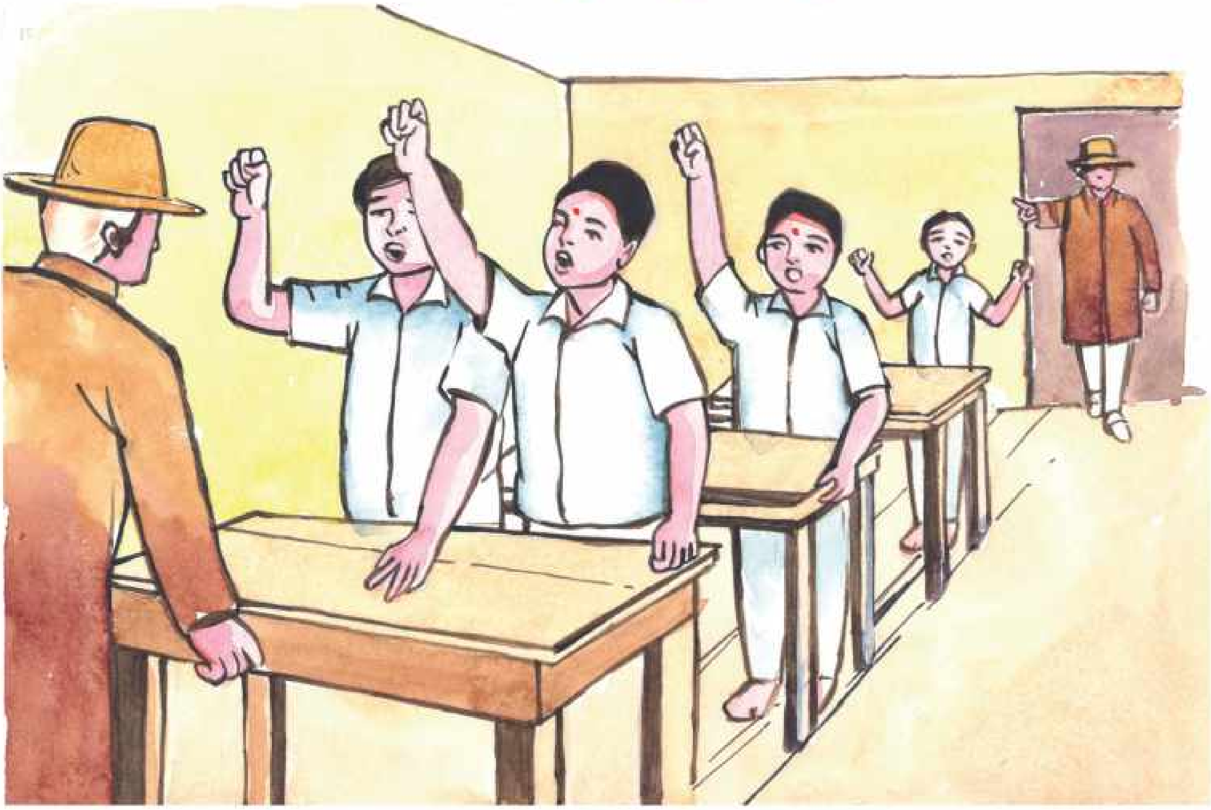

''एक प्रसंग मैं भी बताऊँ ?'' गोविन्द ने पूछा।

सबने सिर हिलाकर स्वीकृति दी। दादाजी ने उसे पीठ पर हाथ रखकर प्रोत्साहित किया। वह कहने लगा– ''एक बार उनके विद्यालय में अँग्रेजी शासन ने प्रतिनिधि शिक्षा अधिकारी विद्यालय निरीक्षण के लिए आए। केशव में संगठन क्षमता तो बचपन से ही अद्भुत थी। सभी सहपाठी उनकी बात मानते थे। सबने एक योजना बनाई जिसकी शिक्षकों को हवा भी न लगने दी। जैसे ही निरीक्षक आए एक के बाद एक हर कक्षा में 'वंदेमातरम्' कहकर उनका स्वागत किया गया। वह अँग्रेजी राज का जमाना था। वंदेमातरम् अँग्रेजों को गाली जैसा लगता था लेकिन भारतीयों के लिए तो यह एक गौरवमंत्र था।

यद्यपि बाद में केशव को इसका दोषी मानकर दंडित भी किया गया पर वे उनकी इस अनूठी योजना से अँग्रेजी पिट्ठू तिलमिला चुके थे।''

सब बच्चों ने फिर हर्ष व्यक्त कर दादाजी के साथ वन्देमातरम् का घोष किया।

घोष सुनकर दादीजी वहाँ आ गईं और मुस्कुराते हुए बोली– ''आज घर में ही शाखा लग रही है क्या ? भोजन का समय हो रहा है।''

दादाजी ने कहा बस दस मिनिट में आते हैं।

संघ समझना है तो केशव चरित्र पढ़ो

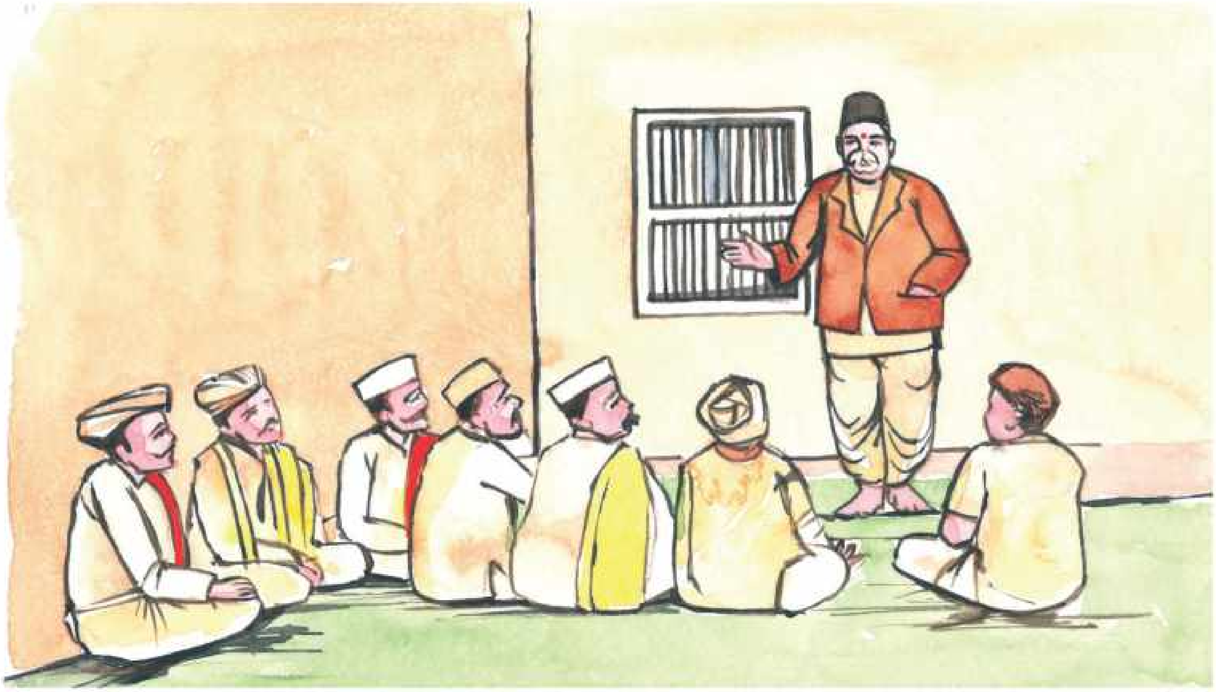

राघव भी कैसे चुप रहता। एक प्रसंग तो उसे भी पता था। उसने बताया– ''सन् १९०१ इंग्लैंड में एडवर्ड... कौन–सा ? कौन–सा ?'' वह अटका। दादाजी ने बता दिया ''सप्तम।''

''हाँ वही उसके राज्यारोहण का अवसर था। इस अवसर पर भारत में भी अँग्रेज भक्तों ने खूब पटाखे चलाए। अब पटाखे चले तो उन्हें देखने की इच्छा किसके मन में न जागेगी। लेकिन केशव चुपचाप उदास मन से बैठे रहे। किसी मित्र ने पूछा तो उनके मन की पीड़ा फूट पड़ी, कहने लगे ''ये हमारे राजा–रानी नहीं हैं हम इनके उत्सव की खुशी मनाएँ ? जबकि इनके ही द्वारा हमारे देश को परतंत्र बनाया हुआ है।'' राघव रुका।

दादाजी ने बातचीत का सिरा फिर अपने हाथ में लिया– ''डॉ. हेडगेवार का पूरा जीवन ही ऐसे अनेक प्रसंगों से भरा पड़ा है। हम संघ में कहते हैं कि संघ समझना है तो डॉक्टर जी की जीवनी पढ़ो। उनके घर की आर्थिक परिस्थिति अच्छी न थी फिर भी वे डॉक्टरी पढ़ने कोलकाता गए। वस्तुत: पढ़ाई के साथ–साथ वे क्रांतिकारी गतिविधियों में भी सक्रिय थे। बाद में वे काँग्रेस से भी जुड़े। उस समय देश की स्वतंत्रता के जितने उपाय, जो–जो संगठन कर रहे थे डॉक्टर जी ने उन सबका अनुभव लिया, लेकिन वे निराश थे, यह सोचकर कि अधिकांश गतिविधियों में बहुत दूरदर्शी चिंतन का अभाव था। स्वतंत्रता लक्ष्य था पर उसके बाद ?

डॉक्टर जी ने सोचा– ''स्वतंत्रता मिलने और उसके बाद क्या ? उनके मस्तिष्क में एक ऐसे संगठन की संकल्पना आकार ले रही थी जो निरंतर ऐसी देशभक्त पीढ़ियों का निर्माण करने में सक्षम हो जो तन, मन, धन से अपनी मातृभूमि के लिए सर्वस्व समर्पण करने के लिए तैयार हों। यह तैयारी हर क्षण रहें। ऐसी राष्ट्रभक्त पीढ़ी, पीढ़ी–दर–पीढ़ी बनाए रखने का कभी न रुकने वाला अनुष्ठान निरंतर रहे। इस विचार पर पर्याप्त विचार मंथन करके उन्होंने इस अनूठे संगठन की स्थापना की।

संघ का बीज का अंकुरण

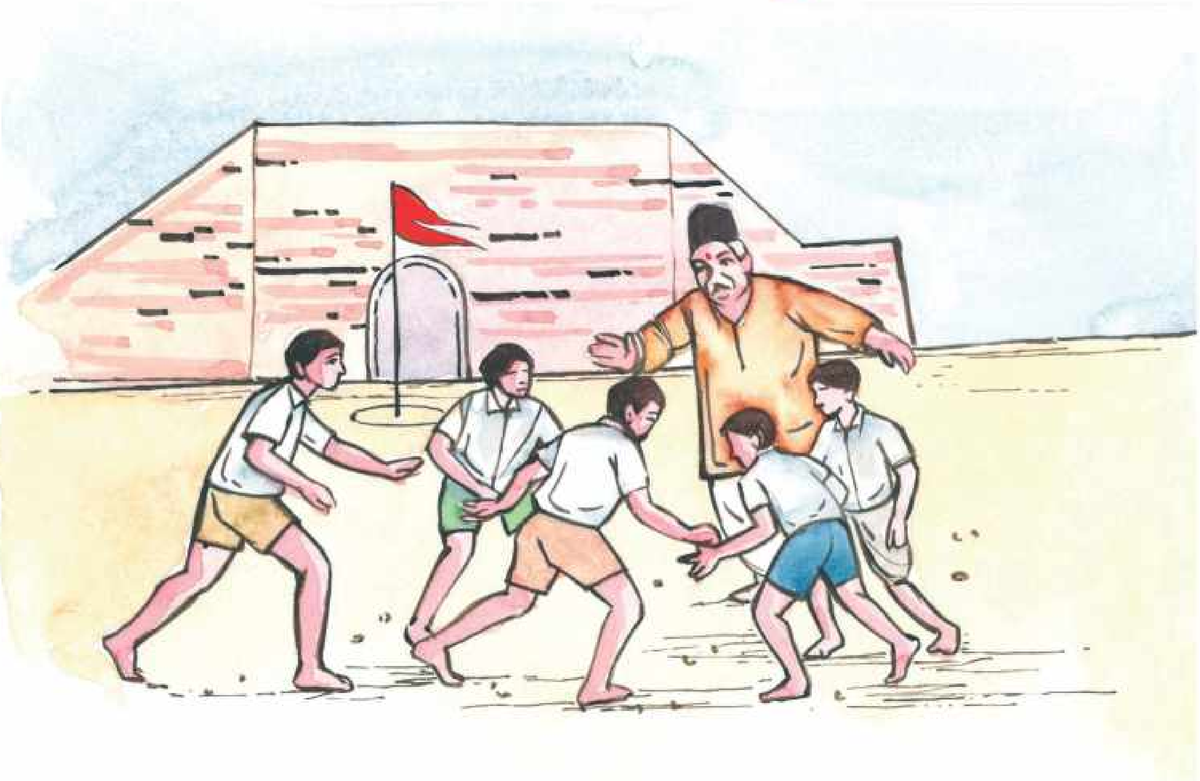

संकल्पना बहुत अच्छी थी पर उसे उस समय की परिस्थितियों में साकार करना उतना ही कठिन। डॉक्टर साहब ने बिना अपने खाने–कमाने और परिवार बसाने की चिंता किए आजीवन अविवाहित रह कर इस प्रकार का संगठन बनाने का अटल निश्चय कर लिया।

भगवान राम के द्वारा रावण को पराजित करने के पर्व विजया दशमी आश्विन शुक्ल दशमी विक्रम संवत् १९८२ युगाब्द ५०२७ को, नागपुर के मोहिते के बाड़े में डॉक्टर साहब ने कुछ किशोरों को साथ लेकर अपने मन में सोचे हुए संगठन के काम का श्रीगणेश किया।

मैं कहता हूँ यह हिन्दू राष्ट्र है

तब संघ के पास न कोई निश्चित नाम था, न कोई कार्यक्रम, न कोई कार्यकर्ता। था तो बस हिमालय जैसा विराट और अटल निश्चय और थे डॉक्टर हेडगेवार जी। अपनी छोटी-सी और अपने से अवस्था में भी छोटी किशोरों की मित्रमंडली के साथ प्रतिदिन निश्चित समय पर एकत्र होना, खेलना, व्यायाम करना और अपने इतिहास, संस्कृति, धर्म, का आधार लेकर राष्ट्रीयता की अवधारणा पर बहुत सरल शब्दों में चर्चा करना।

इस प्रकार एक पढ़े-लिखे डॉक्टर को बच्चों के साथ खेलते, बतियाते, व्यायाम करते देखते तो लोग उनका उपहास करते। लोग कहते- ''डॉक्टर बच्चों को साथ लेकर हिन्दू राष्ट्र बनाना चाहता है ?'' लोग पूछते - ''कौन कहता है यह हिन्दू राष्ट्र है ?''

डॉक्टर जी नि:शंक अटल आत्मविश्वास से छाती ठोककर कहते- **''मैं केशव बलिराम हेडगेवार कहता हूँ यह हिन्दू राष्ट्र है।''**

धीरे-धीरे डॉक्टर जी की दृढ़ इच्छाशक्ति और अटल धैर्य से उनकी बातें लोगों को समझ में आने लगीं। इस प्रकार संघ का विकास आरंभ हुआ।

दादी ने पुन: बुलाने पर सभी चर्चा को यहाँ विराम देकर भोजन हेतु चले गए।

संघ की लगन

भोजन के बाद घर के सभी सदस्य बैठक में बैठे थे। बच्चों के पिताजी सुधांशु व काका सुभाष भी आ चुके थे। बच्चों के मन में संघ के विषय में और भी जानने की तीव्र इच्छा थी तो आज इस गृहसभा में संघ का ही विषय पुन: छिड़ गया। बच्चों के प्रश्न पर दादाजी ने बताया–

डॉक्टर साहब के निर्मल प्रेम और आत्मीयता से नियमित रूप से मोहिते के बाड़े पर मिलना होता था। किसी दिन कोई न आता तो डॉक्टर जी उसके घर जाकर संपर्क करते। इससे प्रत्येक सदस्य को लगता कि वह अपने इस संगठन के लिए कितना महत्वपूर्ण है और डॉक्टर जी का यह आग्रह कि कितनी भी व्यस्तता हो एक घंटा नियमित रूप से संगठन के लिए हमें मिलना ही चाहिए यह प्रेरणा भी जगा रहा था कि संगठन हमारे लिए कितना महत्वपूर्ण है।

धीरे–धीरे संघ का विकास होता गया। सब साथियों से खूब विचार मंथन करके स्थापना के छ: महिने बाद १७ अप्रैल १९२६ को संगठन का नाम निश्चित किया गया। नाम था **'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ'**।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का अर्थ

चंद्रिका ने पूछा– ''दादाजी! राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ इस नाम का क्या अर्थ है?''

दादाजी ने कहा– ''अच्छा यह तुम्हारे पिताजी बताएँ? कभी उन्होंने भी तुम्हारी तरह मुझसे यही पूछा था, तब मैंने उन्हें समझाया था।''

दादाजी की बात पर सब मुस्कुरा उठे। अब उत्तर सुनने को सभी सुधांशु जी की ओर देखने लगे। वे बताने लगे– ''राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में तीन शब्द हैं। पहला है **'राष्ट्रीय'**। राष्ट्रीय का अर्थ लोग अलग-अलग लगाते थे। लेकिन डॉक्टर हेडगेवार ने सुस्पष्ट कर दिया था कि यह राष्ट्र सनातन काल से हिन्दू राष्ट्र है। हिन्दू ही राष्ट्रीय होने की सभी कसौटियों पर खरा उतरता है इसलिए किसी भी प्रकार अपने संगठन में राष्ट्रीय शब्द इसे हिन्दू संगठन ही सिद्ध करेगा। उनका स्पष्ट और अटल मत था कि **हिन्दुत्व ही राष्ट्रीयत्व है।**

दूसरा शब्द है **'स्वयंसेवक'**। अनेक संस्थाओं में इसके समान कुछ शब्द ऐसे सदस्यों के लिए प्रचलित थे जिन्हें दरी बिछाना, मंच सजाना, प्रचार करना जैसे कार्य करने वाले माना जाता था। डॉक्टर साहब ने स्वयंसेवक शब्द की अत्यंत गरिमामय व्याख्या की। उन्होंने समझाया **'स्वयं की प्रेरणा से देश के लिए कष्ट उठाने वाला, निस्वार्थ बुद्धि से समय देने वाला, देश के काम के लिए अगुवाई करने वाला और सर्वस्व समर्पण करने के लिए बुद्धि से सम्पन्न, देशभक्ति से भरा हुआ कार्यकर्ता ही स्वयंसेवक है।''** सुधांशु जी पलभर ठहरे कि बच्चे समझ भी रहे हैं या नहीं?

उनके रुकते ही राघव ने पूछा– ''आप दादाजी व सुभाष काका भी स्वयंसेवक हैं?'' हाँ, हम सब भी स्वयंसेवक हैं और तुम भी भविष्य के स्वयंसेवक ही हो।''

''सबसे बड़ा स्वयंसेवक कौन है?'' सुधा ने पूछा।

उत्तर सुभाषजी दे बैठे– ''स्वयंसेवक छोटे-बड़े नहीं होते। अनुभव, दायित्व, अवस्था से उनकी श्रेणियाँ बनती हैं पर सरसंघचालक जी से लेकर बालशाखा का आज ही आया स्वयंसेवक भी, स्वयंसेवक ही है।''

सुधा ने फिर पूछा– ''सरसंघचालक यानी?''

सुधांशु जी बोले– ''पहले एक बात पूरी कर लें? हम क्या समझ रहे थे?''

माधव व गोविन्द एक साथ बोल पड़े– ''स्वयंसेवक का अर्थ।''

''बिल्कुल सही, अब बचा तीसरा शब्द **'संघ'**। यह शब्द नया नहीं था किसी भी एक वर्ग के लोगों का समूह संघ कहा जाता रहा है जैसे व्यापारी संघ, कर्मचारी संघ। लेकिन डॉक्टर साहब ने बताया 'हमारे संगठन में किसी व्यक्ति या वर्ग के स्वार्थ का तो स्थान ही नहीं है इसलिए हमारे लिए **संघ का अर्थ है निस्वार्थ और समर्पण से राष्ट्रीय कार्यों में जुटे अनुशासित लोगों का संगठन।'** समझे?''

संघ में सर्वोच्च कौन ?

सुधा ने दुहराया– ''सरसंघचालक यानी ?''

सुभाष काका ने बताना आरंभ किया– ''देखो सब जगह यही होता है कि जो व्यक्ति किसी काम या विचार को आगे बढ़ाने का बीड़ा उठाता है, वही उस संगठन का मुखिया होता है। अब संघ की स्थापना तो किसने की थी ?''

माधव बोला– ''डॉक्टर केशवराव हेडगेवार ने।''

''तो वे संघ के सर्वोच्च नेता, गुरु, मार्गदर्शक कुछ भी सर्वोच्च पदवी के स्वयं ही अधिकारी बन सकते थे। लेकिन उन्होंने समझाया 'संघ में किसी व्यक्ति को प्रधान मानने का कोई कारण नहीं है। हम सब एक समान हैं। हमारे मन, विचार, ध्येय और श्रद्धा केन्द्र एक हैं। अपने संगठन की कार्यपद्धति यानी काम करने का ढंग हम सब मिलकर तय करते हैं। हाँ! तय करने पर उसका पालन सभी करते हैं। कुछ परिवर्तन करना हो तो फिर एक साथ बैठते हैं और क्या परिवर्तन ठीक होगा यह मिलकर तय कर लेते हैं। इसलिए संघ में कोई व्यक्ति गुरु रूप में तय नहीं है। गुरु तो है..... ?' सुभाष जी ने बच्चों से प्रश्न कर लिया।

माधव और गोविन्द एक साथ बोले– ''**भगवा ध्वज**।''

''आज भी संघ की शाखाओं में भगवा ध्वज ही गुरु रूप में सबसे श्रद्धेय और प्रणाम करने योग्य है। दादाजी बोले।

''आपने कहा– संघ शाखा। यह क्या ?'' चंद्रिका ने पूछा तो सुधा ने मुँह बनाया उसके प्रश्न का उत्तर जो अधूरा था।

सुधांशु जी ने संक्षिप्त उत्तर दिया– ''शाखा यानी सामान्य तौर पर वह स्थान जहाँ नियमित रूप से, निश्चित समय पर, प्रतिदिन संघ के स्वयंसेवक एकत्र होते हैं। वहाँ भगवा ध्वज लगाकर सामूहिक रूप से खेल, व्यायाम, समता, योग, चर्चा, गीत, प्रार्थना आदि करते हैं। यह एक घंटे की बहुत अनुशासित और समयबद्ध साधना होती है।'' फिर घड़ी देखते हुए सुधांशुजी बोले– ''अभी मैं संघ की बैठक में जा रहा हूँ। आप लोग बातचीत जारी रखें या बाकी बातें कल।''

राघव बोला– ''अब कल ही बैठेंगे। शाम को रावण–वध के लिए भी जो जाना है। पर यह बैठक क्या होती है यह तो बताते जाइए ?''

''जिसे तुम मीटिंग कहते हो। शाखा ने समय के अलावा जब–जब भी जिन स्वयंसेवकों को किसी योजना या समीक्षा के लिए बातचीत करना आवश्यक होता है वे पहले से समय निश्चित कर बैठकर विचार–विमर्श करते हैं, योजना तय करते हैं। संघ में किसी की मनमानी नहीं चलती इसीलिए संघ में सब मिलकर योजना बनाते हैं। यह है बैठक समझे ?''

सरसंघचालक जी

अगले दिन सायंकाल के बाद ही बैठना हो सका। ऐसी सभा में अघोषित अध्यक्ष तो दादाजी ही होते थे। वे बोले– ''बच्चो! कल आप सबने जो संघ के बारे में चर्चा की, प्रश्न पूछे यह मुझे बहुत ही अच्छा लगा। लेकिन सुधा बेटी का उत्तर अधूरा ही रह गया था, इसलिए आज सबसे पहले उसी को पूरा करेंगे।'' फिर सुभाष जी से पूछा– ''तुम बताओगे सुभाष?''

सुभाष जी बोले– ''पिताजी! आज आप ही आरंभ करें।''

दादाजी ने आँखें मूँद लीं, जैसे ध्यानस्थ होकर कोई दृश्य देख रहे हों। बोले– ''डॉक्टर साहब ने जो संघ रूपी पौधा रोपा था, उसका आकार बढ़ने लगा शाखाएँ फैलने लगीं थीं। आरंभिक चार वर्ष बाद ही यानी १९२९ में संघ के प्रशिक्षण वर्ग प्रारंभ हो गए थे। तो तब ऑफिसर ट्रेनिंग केंप या ओटीसी के नाम से जाने जाते थे। उनमें संघ का काम करने के लिए स्वयंसेवकों को प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से प्रशिक्षण दिया जाता था। जो किसी संघ उपयोगी विषय में अधिक जानता वह दूसरों को बताता धीरे–धीरे सब की दक्षता बढ़ने लगी। नवम्बर १९२९ को नागपुर में एक बैठक में संघ के नौ प्रमुख कार्यकर्ताओं सर्व श्री. विश्वनाथ केलकर, तात्याजी कालीकर, अप्पाजी जोशी, बापूराव मुठाल, बाबासाहेब कोलते, बालाजी हुद्दार, कृष्णराव मोहरीर, मार्तण्डराव जोग व देवईकर ने संघ के संचालन और विस्तार की योजना बनाने हेतु डॉक्टर हेडगेवार जी के साथ एक बैठक की। इसी बैठक में एक महत्वपूर्ण निर्णय हुआ, जो सुधा की बात का उत्तर है।''

दादाजी रुके सुधा का मुख प्रसन्नता से भर उठा। सबकी उत्सुकता देखकर दादाजी बताने लगे– ''जैसे परिवार का एक मुखिया होता है, वह सबका मार्गदर्शन करता है, पूछ–परख करता है, समस्या हो तो हल खोजने में सहायता करता है। परिवार के प्रत्येक सदस्य का अपना अस्तित्व है, दायित्व है पर सबमें तालमेल बैठाकर अपनत्व से सबको संगठित रखने का काम इस मुखिया का होता है। इसी से वह सबका आदरणीय होता है और उसकी बात कोई नहीं टालता, वह किसी की कोई कठिनाई होने पर राह बताता है और अपनत्व पूर्ण अनुशासन बनाए रखता है। यद्यपि सभी महत्वपूर्ण निर्णयों में वह परिवार के सदस्यों से परामर्श करता है, सुझाव माँगता है और सब मिलकर परिवार की मान मर्यादा के अनुसार काम करते हैं। वैसे ही संघ में मुखिया के रूप में सरसंघचालक होंगे।

बैठक के अंतिम दिन १० नवम्बर १९२९ को स्वयंसेवकों की एक बड़ी सभा में बैठक के निर्णय सुनाए जाने थे। श्री अप्पाजी जोशी ने आरंभ में ही पहले सरसंघचालक के रूप में डॉक्टर केशवराव बलिराम हेडगेवार जी को 'सरसंघचालक प्रणाम' किया। डॉक्टर साहब को यह पता न था कि सरसंघचालक उन्हें ही बना दिया जाएगा। यह सब जानते थे कि पहले पूछ लिया तो वे अपने लिए अपने लिए यह दायित्व स्वीकार नहीं करेंगे, पर उनसे योग्य इस नये दायित्व के उपयुक्त कोई और था भी नहीं। इसलिए उनके चुने जाने की बात उन्हें पहले नहीं बताई गई थी।

घोषणा सुनकर डॉक्टर साहब सकते में आ गए। कहने लगे– ''यह मुझे पसंद नहीं कि अपने से बड़े आदरणीय त्यागी पुरुषों का प्रणाम ग्रहण करूँ।'' लेकिन सामूहिक निर्णय के विरुद्ध न जाने का नियम भी तो संघ का ही नियम था अनन्त: उन्हें सरसंघचालक का दायित्व स्वीकारना ही पड़ा।

और इस प्रकार डॉक्टर केशवराव बलिराम हेडगेवार संघ के आद्य (सबसे पहले) सरसंघचालक बने।

संगठन सँवरता गया, बढ़ता गया

दस वर्ष और बीत लग गए संघ का विस्तार अब नागपुर और महाराष्ट्र की सीमा से बाहर व्यापक होने लगा। डॉक्टर जी की प्रेरणा से पढ़ाई के बहाने देश के भिन्न-भिन्न प्रांतों में जाकर संघ कार्य करने वाले युवक प्रचारक बन कर गए।

अब संगठन को और अधिक व्यवस्थित बनाने तथा देशव्यापी विस्तार में एकरूपता लाने के लिए संघ के अनुभवी और विचारवान स्वयंसेवक दस दिनों के लिए नागपुर के पास सिंदी नाम के गाँव में बैठे। डॉक्टर हेडगेवार, श्री गुरुजी, अप्पाजी जोशी, नानाजी टालाटुले, बालासाहेब देवरस, कृष्णराव मोहतीर, तात्या तैलंग, बाबाजी साडोलकर, विट्ठल राव पतकी इन प्रमुख कार्यकर्ताओं में थे।

इस बैठक में तय हुई हमारी आज की संघ प्रार्थना, संघ की प्रतिज्ञा, शाखा की पद्धति, गुरु दक्षिणा आदि अनेक बातें।''

माधव ने पूछा, ''यह संघ प्रार्थना क्या बाकी प्रार्थनाओं से अलग है? इसके बारे में कुछ बताइए न दादाजी!''

''अच्छा-अच्छा वह भी बताता हूँ। लेकिन आओ, हम बाहर खुली हवा में बैठते हैं?'' वे बोले।

''बिछाने की दरी ले आऊँ?'' चंद्रिका अंदर जाने लगी तो दादाजी ने रोक लिया।

''अभी दरी नहीं, सीधे धरतीमाता की गोद में बैठेंगे। संघ प्रार्थना का सच्चा भाव तो धरतीमाता की चंदन जैसी धूल को छूकर ही समझा जा सकता है।''

सभी दादाजी के साथ बाहर खुले में बैठ गए। दादाजी ने सबको गोला यानी मंडल बनाकर बैठना सिखाया। बताया कि मंडल में सभी सबको समान रूप से देख सुन सकते हैं। कोई पहला या अंतिम नहीं कोई आगे पीछे नहीं ऊपर नीचे नहीं, यही तो संघ है। सब एक समान, एक-दूसरे से जुड़े हुए और सबका ध्यान केन्द्र में।

संघ में प्रार्थना

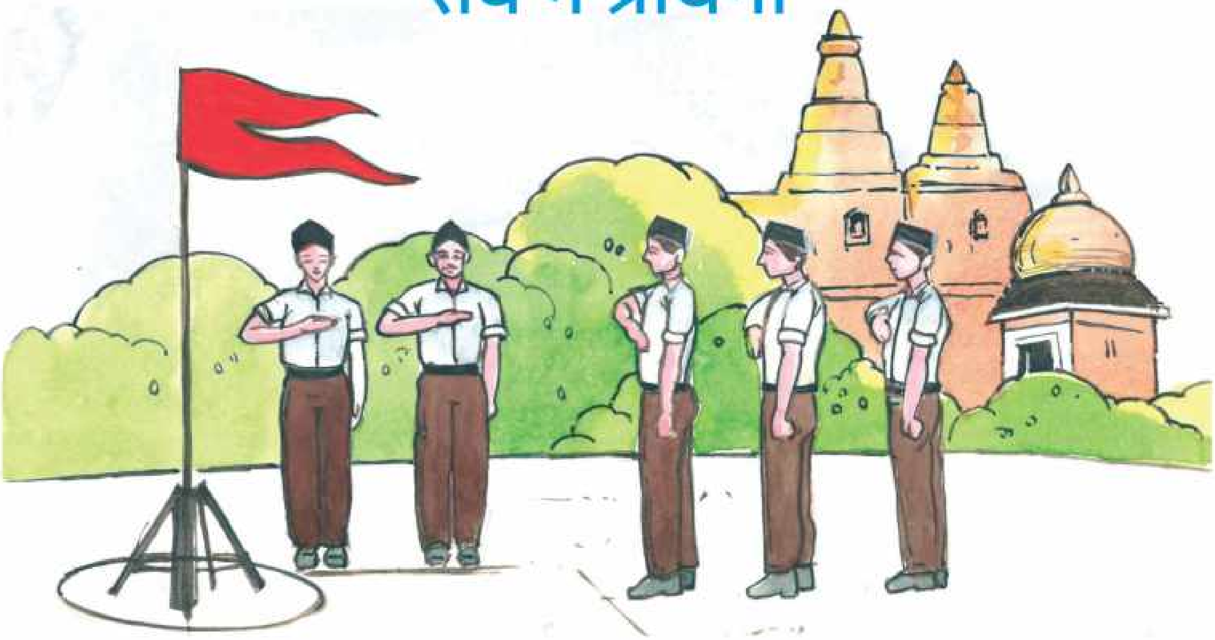

सबको व्यवस्थित बैठाकर दादाजी ने कहना आरंभ किया। ''शाखा के एक घंटे के दैनिक कार्यक्रम में सबसे महत्वपूर्ण है प्रार्थना। वैसे तो हिन्दुधर्म ही नहीं संसार के लगभग सभी धर्मों में, विद्यालयों में कोई न कोई प्रार्थना अवश्य होती है। जिसमें जिसे भी वे सबसे बड़ा और सर्वशक्तिमान मानते हैं उससे अपने लिए कुछ माँगते हैं।''

राघव बोला– ''जैसे जय जगदीश हरे आरती में हम 'सुख–संपत्ति घर आवे कष्ट मिटे तन का' कहते हैं वैसे ?''

''बिल्कुल वैसे ही लेकिन संघ की प्रार्थना में हम अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए कुछ नहीं माँगते यह इस प्रार्थना की सबसे बड़ी विशेषता है। इसीलिए कहा जाता है कि प्रार्थना, संघ का मंत्र है, सार है।'' दादाजी भाव–विभोर हो रहे थे।

गोविन्द पूछ बैठा– ''ये प्रार्थना है किस देवी–देवता की ?''

दादाजी मुस्कुराए– ''बढ़िया प्रश्न है गोविन्द! संघ को तो सारे हिन्दू समाज को संगठित करना है और सबसे अधिक देवी देवता तो हमारे धर्म में ही हैं।''

चंद्रिका ने पूछा– ''तैंतीस करोड़ हैं न दादाजी ?''

दादाजी ने कहा– ''हाँ! ऐसा ही कहा जाता है। अब संघ में किसी एक की प्रार्थना की जाती तो बाकी देवी–देवताओं को मानने वाले नाराज रहते और सबकी प्रार्थनाएँ अलग–अलग होतीं तो एकरूपता कैसे रहती। इसलिए संघ में उस पवित्र मातृभूमि की प्रार्थना है जिस पर जन्म लेने को तो देवता भी तरसते हैं। हम सबकी मातृभूमि यही हिन्दुभूमि भारत है इसलिए संघ में मातृभूमि की प्रार्थना की जाती है।''

माधव ने जिज्ञासा की– ''संघ प्रार्थना की भाषा कौन–सी है ? क्योंकि संघ तो सारे भारत में फैला है और सारे भारत में तो अनेक भाषाएँ बोली जातीं हैं।''

''चलो मैं इसका इतिहास भी बताता हूँ।''

नमस्ते सदा वत्सले मातृभूमे!

''यह तो तुम जान ही चुके हो कि संघ की स्थापना भारत के नागपुर नगर में हुई और उस क्षेत्र में मराठी भाषा बोली जाती है। स्वाभाविक था सबसे पहले मराठी भाषी लोग ही स्वयंसेवक बने। तब संघ की प्रार्थना में पहला पद मराठी में था–

'नमो मातृभूमी जिथे जन्मलो मी, नमो जन्मभूमी जिथे वाढलो मी
नमो धर्मभूमी जियेच्याच कामी, पड़ो देह माझा सदा ती नमी मी'

मूलभाव वही था जैसा आज की प्रार्थना में है पर इसकी भाषा मराठी थी। इसमें दूसरा पद हिन्दी में था।

'हे गुरो श्रीराम दूता! शील हमको दीजिए। शीघ्र सारे सद्गुणों से पूर्ण हिन्दू कीजिए।
लीजिए हमको शरण में रामंथी हम बनें, ब्रह्मचारी धर्मरक्षक वीरव्रतधारी बनें।'

''तो इसे कब व क्यों बदला?'' गोविंद ने प्रश्न किया। ''जब संघ का विस्तार महाराष्ट्र के मराठी भाषी क्षेत्र के बाहर भी होने लगा, तब १९३९ की सिंदी ग्राम में हुई प्रमुख कार्यकर्ताओं की बैठक में चिंतन हुआ कि ऐसा ही मूलभाव लेकर प्रार्थना एक ऐसी भाषा में होना चाहिए जिसे समस्त भारत श्रद्धापूर्वक मान्य करता हो और वह भाषा देववाणी संस्कृत ही थी। ईश्वर की कृपा से उस बैठक में श्री नरहरि नारायण भिडे जी ने वर्तमान संघ प्रार्थना के शब्द रचे–

'नमस्ते सदा वत्सले मातृभूमे

त्वया हिन्दुभूमे सुखं वर्धितोऽहम्।' से लगाकर 'भारत माता की जय' तक मातृभूमि की सेवा के लिए, राष्ट्र के सब प्रकार उत्थान के लिए की ईश्वर से अजेय शक्ति, उत्तम चरित्र यानी सुशील, कठिन से कठिन मार्ग पर चलने का ज्ञान, वीरव्रत यानी निडरता से किसी भी काम को करने का भाव और अडिग ध्येय निष्ठा ये गुण माँगे हैं। मातृभूमि का काम करने के लिए ही हम कमर कस कर तैयार हुए हैं और अपने को इस राष्ट्र का अंग मानते हुए इसके लिए प्राण भी दे सकते हैं ऐसे भावों वाली यह प्रार्थना बनी।

प्रार्थना का गीत तैयार हुआ तो उसके प्रत्येक शब्द पर परस्पर खूब विचार मंथन हुआ, आवश्यक सुधार संशोधन होकर आज का प्रचलित रूप निश्चित हुआ। स्वयंसेवक श्री यादवराव जोशी जी जो बहुत अच्छे संगीतज्ञ थे उन्होंने इसकी धुन बनाई और उसे ही ज्यों का त्यों आज तक सब स्वयंसेवक दुहराते हुए गाते हैं।

फरवरी १९३९ में बनी वर्तमान संघ प्रार्थना का पहला सार्वजनिक गायन २३ अप्रैल १९४० में पुणे के ऐतिहासिक संघ शिक्षा वर्ग में हुआ। और कुछ जानना हो तो कल मेरे मित्र और वरिष्ठ प्रचारक हरीश जी भोजन पर आ रहे हैं उनसे भी पूछ सकते हो।''दादाजी ने आज की सभा विसर्जित की।

प्रचारक जी के साथ परिचय

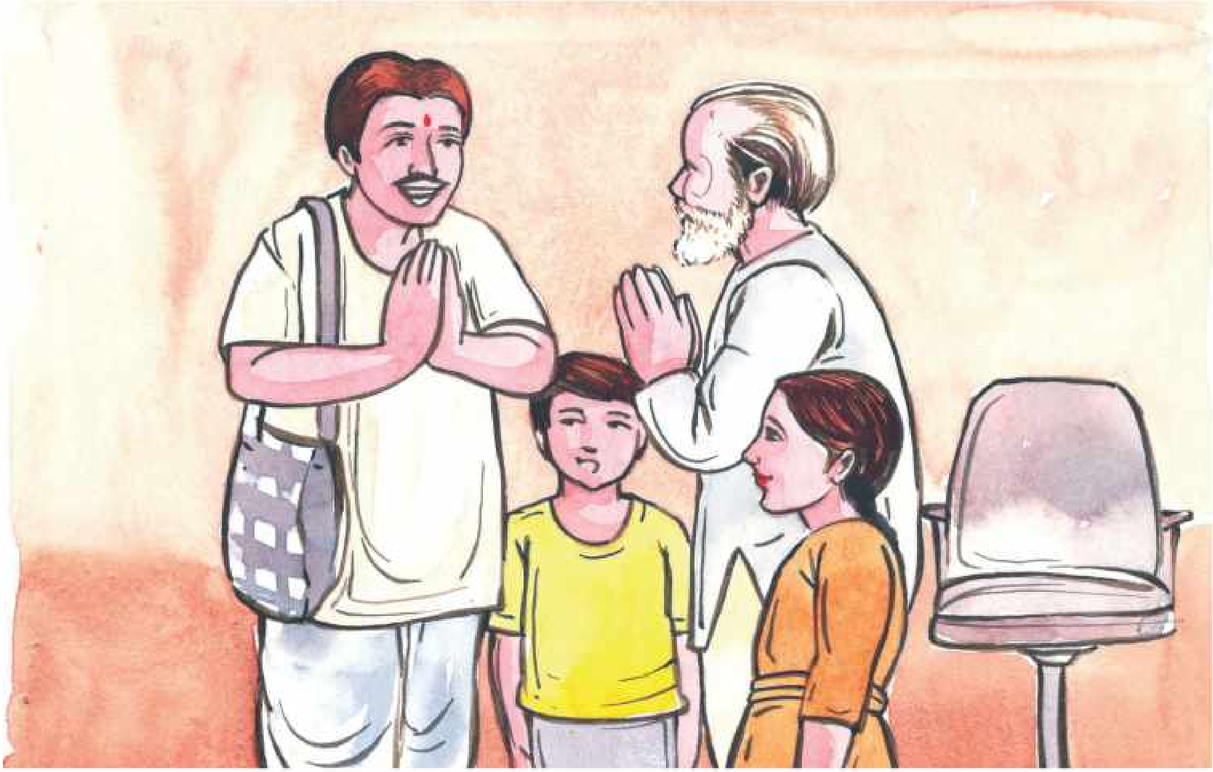

अगले दिन रविवार था। शाला का अवकाश होने से बच्चे घर ही थे। दुपहर ग्यारह बजे के लगभग दोलंगी धोती व आधी बाँह का कुर्ता पहने, कांधे पर झोला लटकाए, एक प्रौढ़ सज्जन आए तो सभी बच्चे समझ गए ये ही प्रचारक जी होंगे।

सुधा बोली– ''यह तो समझ आया कि ये प्रचारक हैं, पर प्रचारक कहते किसे हैं यह तो समझ में नहीं आया।''

दादी ने यह सुनकर समझाया– ''प्रचारक यानी वे लोग जो बिना अपनी घर–गृहस्थी बसाए, बगैर नौकरी धंधा करके पैसे कमाने की जुगाड़ में लगे, अपना पूरा जीवन संगठन की योजना से संघ कार्य यानी भारतमाता की निस्वार्थ सेवा में समर्पित कर देते हैं। उनका काम पूरे समय संगठन का कार्य बढ़ाना होता है। वे संघ के विचारों का प्रचार करते हैं इसलिए प्रचारक कहलाते हैं। इन्हें बदले में कोई वेतन नहीं मिलता, रहने के लिए अपना निजी घर भी नहीं, बस स्वयंसेवकों के सहयोग से उनकी सम्मानपूर्वक व्यवस्था की जाती है। जोकि बहुत सादगी भरी होती है। अच्छा, जाओ जाओ, सब लोग उन्हें नमस्ते करो, बातें करो। बच्चों से बातें करना उनको बहुत अच्छा लगता है।''

बच्चा टोली बैठक में पहुँची जहाँ प्रचारक हरीश जी बैठे थे। बच्चों को देखते हुए बोले– ''आओ, आ जाओ! डरो नहीं। हम कहानी सुनाएँगे, कहोगे तो गीत या नया खेल भी सिखा सकते हैं। पहले अपना–अपना नाम बताओ, कक्षा बताओ फिर और बातें होंगी।'' उनकी स्नेह भरी बातों से बच्चों का संकोच छू–मंतर हो गया। बच्चे उन्हें नमस्ते कहते नाम व कक्षा बताते गए और हरीश जी ने सबको अपने आसपास बैठा लिया।

खूब जमी गोष्ठी

हरीश जी बोले– ''अच्छा हम सब एक गीत गाते हैं इसे याद करके अपनी शाला में भी सुना सकते हो। बोलो गाओगे ?''

बच्चे जैसे भूल ही गए कि वे एक प्रौढ़ अतिथि हैं जिनसे उनका अभी–अभी परिचय हुआ है। हरीश जी ने सबसे छोटी सुधा से पूछा– ''ठीक है ?''

''ठीक है।'' उत्तर मिला फिर सब बच्चों से ऐसे ही पूछा। सभी सहमत थे। तब वे बोले ''आधी–आधी पंक्ति पहले मैं बोलूँगा पीछे आप सब दुहराना।''

बच्चों ने हाँ कहा तो हरीश जी ने गीत आरंभ किया–

'देश हमें देता है सब कुछ', बच्चों ने दुहराया।

'हम भी तो कुछ देना सीखें।' बच्चों ने फिर दुहराया।

'सूरज हमें रोशनी देता, हवा नया जीवन देती है।
भूख मिटाने को हम सबकी, धरती पर होती खेती है।
औरों का भी हित हो जिसमें, हम ऐसा कुछ करना सीखें।'

गीत की एक–एक पंक्ति बच्चे मस्त होकर गा रहे थे। तभी सुधांशु जी आ गए। सब चुप हो गए।

सुधांशु जी हँसकर बोले– ''हरीश जी! हमारे घर में तीन दिनों से संघ चर्चा ही हो रही है। आज आपको भी कई प्रश्नों के उत्तर देना पड़ सकते हैं इस वानर सेना को।''

हरीश जी ने ठहाका लगाया– ''अंधा क्या चाहे, दो आँखें। अरे भाई! घरबार छोड़कर प्रचारक इसीलिए तो बने हैं। आज भोजन ही नहीं रात्रि विश्राम भी यहीं कर सकता हूँ तब तो। कल यहीं से बैठक के लिए चला जाऊँगा। बस ? और कहिए।''

गायक सब हैं गीतकार प्रायः अज्ञात

चंद्रिका को संगीत में बड़ी रुचि थी। उसे गीत बहुत ही अच्छा लगा। उसने पूछा ''आपने ये गीत कहाँ से सीखा ?''

हरीश जी बोले– ''संघ में। शाखा पर ऐसे कई गीत गाए जाते हैं।''

''और ये गीत बनाता कौन है किसने लिखे हैं ?''

''स्वयंसेवकों में देश व समाज के प्रति अच्छे भाव, प्रेरणा, उत्साह जगाने के लिए गीत गाए जाते हैं। अधिकांश गीत के रचनाकार स्वयंसेवकों में से ही होते हैं जो अपना गीतकार के रूप में अपना नाम तक नहीं बताते। उसकी धुन भी किसने बनाई यह कोई नहीं जानता। एक–दूसरे से सीखते हुए ये गीत हजारों स्वयंसेवकों को कंठस्थ हो जाते हैं।''

''ऐसे कितने गीत होंगे संघ में ?'' चंद्रिका को आश्चर्य हो रहा था।

हरीश जी ने ठहाका लगाया– ''कोई नहीं जानता, फिर सारे गीत हिन्दी में ही नहीं हैं देश की सभी भाषाओं में संघगीत हैं, संस्कृत में भी हैं तो स्थानीय बोलियों में भी। हर प्रसंग के लिए, कुछ अकेले गाए जाते हैं। हम उन्हें एकल या व्यक्तिगत गीत कहते हैं, कुछ सामूहिक गाए जाते हैं, उन्हें सांधिक या सामूहिक गीत कहते हैं। पर सबका उद्देश्य है केवल राष्ट्रीय भावना जागरित करना। गीत शाखा की नियमित गतिविधियों का अंग है प्रायः बौद्धिक के पहले एक स्वयंसेवक कोई गीत कहता है जो उस बौद्धिक के विषय की भूमिका तैयार करता है, उस समय शेष स्वयंसेवक उसे एकाग्र होकर सुनते हैं। लेकिन शेष अवसरों पर गीत सामूहिक ही गाए जाते हैं।''

''शेष अवसर यानी कब ?''

''जब भी सामूहिक बैठते हैं इधर–उधर ध्यान न भटके इसलिए गीत गाया जाता है, संचलन में, शाखा पर, शिविरों में, सभाओं में। ये बड़े भावभरे और सीधी सरल धुन में होते हैं इसलिए सहज याद हो जाते हैं।''

''बस एक बात और बताइए, क्या इन्हें केवल संघ वाले ही गा सकते हैं ?''

इस प्रश्न पर हरीश जी का ठहाका फिर गूँज उठा– ''सुनो! एक बात समझ लो। संघ में शाखा पर जो भी होता है, गीत ही नहीं बाकी कार्यक्रम भी, उन्हें समाज में कोई भी कर सकता है। संघ समाज का ही है इसलिए गीत गाओ, व्यायाम करो, योगासन करो, सुभाषित कहो, भारतीय खेल खेलो, राष्ट्रीय व सामाजिक विषयों पर चर्चा करो और सबसे अधिक समाज में सेवा करो। इन सबको करने के लिए संघ तो स्वयं होकर समाज को प्रेरित करता है।''

''तो यह गीत मैं अपने विद्यालय में भी गा सकती हूँ ?'' चंद्रिका के स्वर में चहक थी।

हरीश जी ने प्रोत्साहित किया– ''गाओ, गाओ, अवश्य गाओ।'' फिर अपने झोले से एक छोटी–सी पुस्तिका निकाली और चंद्रिका को देते हुए कहा– ''इसमें ऐसे और भी गीत हैं, धुन तुम्हारे दादाजी, पिताजी, काकाजी कोई भी सिखा देंगे। सीखकर तुम औरों को सिखा देना।''

माँ! भोजन के लिए बुला रही थी इसलिए सब रसोईघर की ओर बढ़ चले।

साथ में भोजन का आनंद

सभी धरती पर ही आसन बिछाकर बैठे। हाथ–मुँह धोकर सब भोजन करने बैठे। सबने सामूहिक रूप से भोजन मंत्र कहा–

''ब्रह्मार्पणं ब्रह्मविर्, ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम्।
ब्रह्मैवतेन गन्तव्यं ब्रह्म कर्म समाधिना।।
ॐ सहनाववतु। सहनोभुनक्तु। सहवीर्यं करवावहै।
तेजस्विनावधीतमस्तु माविद्विषावहै।
ॐ शांति: शांति: शांति:।''

हरीश जी बहुत प्रसन्न हुए– ''वाह! भोजन मंत्र सबको आता है।''

सुधांशु जी ने बताया– ''हाँ! पिताजी ने सिखाया है, भोजन के पहले यह तो हमारे यह अतिथियों को भी कहना होता है।''

इस भाव की एक हिन्दी प्रार्थना भी है–

अन्न ग्रहण करने से पहले विचार मन में करना है।
किस हेतु से इस शरीर का रक्षण पोषण करना है।
हे परमेश्वर! एक प्रार्थना नित्य तुम्हारे चरणों में
लग जाए जन–मन–धन मेरा मातृभूमि की सेवा में।।

प्रसन्न होकर सबने प्रेम से भोजन किया।

हिन्दु भूमि की हम संतान

भोजन के बाद चंद्रिका और सुधा माँ और दादी के पास रसोई के कुछ कामों में हाथ बँटाने रुक गईं पर राघव, माधव और गोविन्द हरीश जी के साथ चले तो सुभाष जी ने कहा– ''भाई साहब! को थोड़ा विश्राम करने दो, फिर बातें करना।''

''भाई साहब! ये आपके भाई हैं? पर आपसे तो काफी बड़े हैं।'' गोविन्द पूछ बैठा।

उत्तर हरीश जी ने ही दिया– ''संघ में सब स्वयंसेवक आपस में भाई ही हैं, सभी भारतवासी भी। सबकी माता भारतमाता ही है। तो हुए न सब भाई– बन्धु? संघ में प्राय: अपने से बड़ों को सम्मान भरी आत्मीयता से भाई साहब कहते हैं और बराबरी वालों या छोटों को भी जी लगाकर पुकारते हैं गोविंद जी! समझे? याद रखो–

सबकी माता, भारतमाता। भारतवासी भगिनी भ्राता।।

हिन्दुभूमि की सब संतानें। अमिट हमारा सबसे नाता।।''

फिर वे सुभाषजी से बोले– ''विश्राम की आवश्यकता नहीं लग रही पर आइए, आपसे कुछ चर्चा कर लें।'' फिर बच्चों से बोले– ''अच्छा अभी आप सबकी एक घंटे की छुट्टी। ठीक है?'' बच्चों ने सिर हिलाकर सहमति दी। सुभाष जी और हरीश जी कमरे में चले गए।

संघ का सरल अर्थ

एक घंटा होने से पहले ही बच्चे कमरे में झाँकने लगे। हरीश जी ने देख लिया, बोले– ''आइए, आ जाइए। आपका समय आरंभ होता है अब।'' वे तुरंत बच्चों से घिर गए। चंद्रिका व सुधा अभी नहीं आई थी पर राघव का एक मित्र सुधीर इस सभा का नया सदस्य बना था।

राघव ने उसका परिचय कराया और कहा– ''इसे भी कुछ पूछना है?''

''पूछिए, पूछिए सुधीर जी!'' हरीश जी ने हँसते हुए कहा।

सुधीर नया होने से थोड़ा संकोच से बोला– ''काका!''

वह आगे कुछ कह ही रहा था कि माधव ने टोका– ''काका नहीं! भाई साहब हैं ये।''

हरीश जी समझ गए कि पहले ही शब्द पर टोका–टाकी से सुधीर खुलकर बात ही नहीं करेगा। वे माधव से बोले– ''माधव जी! आप उन्हें सिखाएँगे, तब तो वह जानेंगे लेकिन पहले हम सुधीर जी की बात सुन लें?''

सुधीर सहज हुआ। बोला– ''ये संघ क्या होता है?''

''सुधीर जी! सरल से सरल शब्द में कहूँ तो संघ यानी मिलना, मिल जाना, अर्थ इतना ही है पर भावार्थ गहरा है। मिलना तो किनको?, किसलिए?, कब?, कहाँ? इनके उत्तर में संघ समाया है।

मिलना उन सबको यह भारतभूमि जिनके लिए माता है और वे इसकी सेवा के लिए अपने अब कामों से आवश्यक और पहले क्रम पर इसके काम को रखते हैं। क्यों मिलना? वह इसलिए कि हम अपने देश, समाज, संस्कृति, प्रकृति की आवश्यकताओं और समस्याओं को समझकर उसके लिए हम क्या कर सकते हैं? अपना यह कर्त्तव्य समझें और मिलकर काम करें। इसके लिए निश्चित समय पर, हम सब समान विचार के लोग नियमित रूप से, एक स्थान पर, मिलते हैं। वह है 'संघस्थान' यानी शाखा लगाने का स्थान।''

माधव ने पूछा– ''प्रतिदिन मिलना क्यों आवश्यक है? वर्ष या माह में एक बार मिल लो और सब बातें कर लो। योजना बना लो और काम करो।''

''हम भोजन तो प्रतिदिन करते हैं, नहाते हर दिन हैं, खेलते हैं, सोते हैं, शाला या कार्यालय या दुकान जाते हैं क्यों? क्योंकि ये हमारे निजी काम हैं हम इन्हें हर दिन करना आवश्यक मानते हैं। कुछ काम जो हमारे परिवार के लिए सामूहिक करना होते हैं, जैसे माँ सबके लिए भोजन बनाती है, पिताजी सामान लाते हैं। काका आप सबको घर पर पढ़ाते हैं। अब सोचो, क्या हमारा देश, हमारा समाज, हमारी भारत माता, हमारे नहीं हैं।''

बच्चों ने स्वीकार सूचक सिर हिलाया। ''तब निजी या घर–परिवार के कामों की तरह अपने देश और समाज के लिए भी हमारी दिनचर्या में नियमित समय होना चाहिए कि नहीं?'' तब बच्चों ने फिर हामी भरी।

''बस इसीलिए हमें कम से कम एक घंटा प्रतिदिन शाखा पर मिलना ही चाहिए। यह संघ है।''

सुधीर ने पूछा– ''मिलकर क्या करेंगे? क्या करना है? यह कौन बताएगा? सब समान हैं इसलिए कोई कुछ कहेगा, कोई कुछ। तब?''

कठिन नहीं बहुत सरल है

हरीश जी ने समझाया– ''यह विचार संघ संस्थापक ने पहले ही कर लिया था। लेकिन संघ के लोगों का मिलना केवल दिखावे का मिलन नहीं है। साथ–साथ उनके मन, विचार, उद्देश्य, काम करने का प्रकार सब एक समान हो जाते हैं। फिर किसी का कोई व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं होता। कोई जाति–पाँति, ऊँच–नीच, अमीर–गरीब, भाषा–प्रांत का भेद–भाव जरा भी नहीं। इसलिए मतभेदों की संभावना ही नहीं फिर भी सबकी समझ एक समान नहीं होती। कोई नया रहता है, कोई पहले से है, इसलिए सब के लिए कुछ सामान्य रीति–नीति, काम करने का ढंग, क्या करना क्या नहीं करना यह सबने मिलकर तय किया हुआ है। यह संघ पद्धति कहलाती है। कुछ नया जोड़ना होता है तो फिर सामूहिक बैठकर तय करते हैं। जैसा तय है वैसा करना, यही संघ अनुशासन है।''

''वाह! 'मिलना' छोटा–सा शब्द है पर उसके लिए कितनी बातें सोची गईं हैं। आश्चर्य है।'' राघव ने कहा।

''इसी का परिणाम है कि आज लगभग सौ वर्षों से संघ लगातार मजबूत हो रहा है बढ़ रहा है। देश ही क्या विश्व के अनेक देशों में आज संघविचार से अनेक काम हो रहे हैं। हजारों शाखाएँ देश के कोने–कोने में, ग्रामों–नगरों में चल रही हैं लेकिन उनमें कोई मतभेद नहीं। एकरूपता, एकमन, एक विचार और सबके केन्द्र में केवल भारतमाता, यह है संघ।''

संघ समझने का सरल तरीका : शाखा

''कुछ और भी बताइए न, संघ के बारे में। बहुत अच्छा लग रहा है। मैं तो समझता था कि राघव-माधव के पिताजी और काका पता नहीं रोज सबेरे डंडा लेकर कहाँ चल देते हैं? किसी से झगड़ा-वगड़ा करने तो नहीं जाते?'' सुधीर उत्साहित था, सब सुनकर।

हरीश जी बोले- ''संघ को समझना है तो बातों से थोड़ा समझ में आएगा। पुस्तकें पढ़कर थोड़ा और समझ सकते हो पर पूरा समझना है न तो एक ही उपाय है भाई! उसके बिना पढ़-सुनकर संघ पूरा नहीं समझ सकते।''

''वह उपाय क्या है?'' सुधीर ने पूछा।

''वह है शाखा। **प्रतिदिन शाखा जाते हुए बिना कुछ पढ़े भी संघ अच्छी तरह समझ आने लगता है।**''

''और यह शाखा जाने के लिए क्या करना होता है भाई साहब? कोई शुल्क? सदस्यता? अनुमति? पंजीयन?'' सुधीर ने जिज्ञासा बताई।

''चलो शाम को तैयार रहना सब बताता हूँ।'' हरीश जी बोले।

''तैयारी यानी क्या? संघ के शर्ट, पेंट, टोपी, बेल्ट, जूते तो नहीं हैं मेरे पास।'' सुधीर संकोच से बोला।

''अभी कुछ नहीं चाहिए। तुम हो न? यह सबसे जरूरी है। बस जैसे हो वैसे ही चलेंगे।''

''राघव, माधव, गोविन्द भी चलेंगे। आज से तुम्हारा संघ प्रवेश। ठीक है?''

बच्चों ने ताली बजाकर प्रसन्नता दिखाई।

शाखा का आनंदलोक

सायंकाल चारों बच्चे थोड़ी दूर से ही एक मैदान में लगने वाली शाखा का दृश्य देखकर ही खुशी से उछल पड़े।

एक ओर भगवा झंडा लगा हुआ था। एक साफ स्वच्छ मैदान। चारों ओर चूने से सीमारेखा बनी हुई थी। ध्वज के चारों ओर चूने से एक छोटा घेरा बना था। पास ही सबके दण्ड जमाकर रखे हुए थे। मैदान के किनारे एक पंक्ति में सबके जूते-चप्पल रखे हुए थे।

पन्द्रह बीस बच्चे खूब आनंदित होकर खेल रहे थे। एक के पास सीटी थी, वह थोड़ी देर में सीटी बजाता तो एक खेल तुरंत रुकता और दूसरा आरंभ हो जाता। कितने तरह के खेल! कोई गोला बनाकर तो कोई छूने, पकड़ने का, कोई दो टीमें बनाकर तो कोई दण्ड के साथ। बीच-बीच में भारत माता की जय, जय-जय केशव, जय जय माधव, वंदेमातरम् जय भवानी जय शिवाजी, हर हर बम-बम, रुद्रदेवता जय जय काली, जय शिवा सरदार की जय राणा प्रताप की, जैसे जोश भरे घोष लगाते बच्चों में अपार उत्साह था।

सीख नहीं अनुभव

हरीश जी बच्चों को प्रेरित करना चाहते थे पर जबरदस्ती नहीं करके उनके मन में स्वयं ही प्रेरणा जगे, ऐसा सोचकर कुछ देर दूर खड़े रहे।

राघव ने सुधीर से कहा– ''कितना आनंद आ रहा है भाई।'' सुधीर बोला– ''अरे! वह जो सीटी बजाकर सबको खिला रहा है वह तो हमारे विद्यालय के चौकीदार काका का बेटा है।''

''और देखो–देखो वह घनश्याम, हमारे मंदिर वाले पंडित जी का बेटा! अरे! प्राचार्य जी का भतीजा मुकुंद भी तो है।'' गोविन्द बताने लगा।

माधव ने कहा– ''वह नीली शर्ट में पहचाना? राधा मौसी आती है न, हमारी कॉलोनी में सफाई करने, उनके साथ ही तो आता है कई बार।''

हरीश जी चुपचाप सुन रहे थे। इसीलिए तो कहते हैं संघ सीखने का नहीं अनुभव करने का विषय है। बहुत–कुछ अपने आप आने लगता है जैसे फूल के पास जाते ही सुगंध अपने आप मिलने लगती है।

तभी सुधीर के मुँह से निकले एक वाक्य ने हरीश जी को बोलने पर विवश कर दिया। वह बोला– ''इस सत्येन्द्र और सुशील के परिवार में तो पिछले दिनों जमकर बोलचाल हो गई थी, पर यहाँ तो शेर बकरी सब एक घाट पर पानी पी रहे भैया!!'' राघव कहने लगा– ''और छोटे पंडित जी राधा मौसी के बेटे को पीठ पर चढ़ाए दौड़ रहे हैं। पंडित जी ने देख लिया तो तीन बार नहला देंगे इसे।'' वह हँस पड़ा।

हरीश जी बोले– ''इनमें कोई बकरा–बकरी नहीं है सुधीरजी! ये सब भारतमाता के शेर बच्चे हैं। और राघव जी! जो संघस्थान की इस पवित्र धूल में नहा चुके उसे संसार में कोई अपवित्र नहीं कर सकता। जानते हो न भारतमाता की धूल को मस्तक पर धारण करने के लिए तो देवता भी तरसते हैं।''

संघ प्रवेश का दिन

कुछ देर देखने के बाद गोविन्द से नहीं रहा गया– ''भाई साहब! इतने नए–नए खेल इनको कैसे आते हैं? कोई बेट न फुटबॉल, हॉकी न स्टिक। क्या बात है!''

''तुम लोगों को भी खेलना हैं?'' हरीश जी ने समझ लिया अब असली भूख जागी है इनमें। भूख मर जाए इसके पहले ही प्रसाद चखा देना चाहिए। बोले– ''तुम्हें भी खेलना है इनके साथ?''

हर्ष और उत्साह भरा सामूहिक उत्तर मिला ''हाँ हाँ हमें भी खेलना ही है।'' बच्चे एक–दूसरे हाथ पकड़कर बोले।

''तो चलो चलते हैं, पर शाखा के कुछ नियम होते हैं, पहले जैसे मैं बताऊँ वैसे हम ध्वज को प्रणाम करेंगे, जैसे मैं करूँ वैसे करना बस। डरने की बात नहीं है कोई। फिर शाखा के प्रमुख कार्यकर्ता को प्रणाम कर उनकी अनुमति से वे जिस गण में भेजें जाना रहेगा।''

''गण क्या?'' गोविन्द ने पूछा।

''गण यानी ग्रुप, समूह। यह मनमानी नहीं कि राघव जिस गण में है माधव या सुधीर भी उसी में रहेंगे। ठीक है? बस एक बात और, बिना अनुमति बीच में से भागना नहीं। शाखा के अंत में सब संघ प्रार्थना करेंगे अब घर चलेंगे ठीक है?''

बच्चे को इतना करने में क्या आपत्ति होती? वे सहर्ष सहमत थे।

आज शाखा में 'ध्वज प्रणाम' के साथ ही उनका संघ प्रवेश हो चुका था। अब वे भी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक बन चुके थे। **इतना सरल है सौ वर्ष पुराने, विश्व के सबसे बड़े स्वयंसेवी संगठन का अंग बन जाना।**

तुम शेर हो मेमने नहीं

शाखा पर चार–चार नए स्वयंसेवकों के आने से सब बहुत आनंदित हुए। अत्यंत हर्षपूर्वक प्रेमपूर्ण वाणी से ऐसे स्वागत किया मानो वे अपरिचित न होकर बहुत आत्मीय साथी हों। अभी सब एक खेल ही और खेल पाए थे कि मुख्यशिक्षक की सीटी सुनकर बौद्धिक कालांश आरंभ हुआ। सब गोल मंडल बनाकर बैठ गए। आज बौद्धिक कालांश में कथा कथन का दिन था। कहानी ऐतिहासिक होती या कभी कोई बोधकथा। मुख्य शिक्षक जी ने प्रचारक श्री हरीश जी का परिचय करवाया फिर उन्हीं से एक कहानी सुनाने का निवेदन किया। हरीश जी ने आज एक बोध कथा सुनाई– एक बार एक जंगल में एक शेरनी अपने बच्चों के साथ शिकार की खोज में घूम रही थी कि शिकारियों के एक दल ने उसका ही शिकार कर लिया। बेचारी शेरनी के बच्चे अनाथ हो गए। वे डरकर एक झाड़ी में छुप गए थे इसलिए शिकारियों की दृष्टि से बचे रहे। थोड़ी देर बाद एक बकरी अपने मेमनों के साथ घास चरते–चरते उधर आ निकली। शेर के अबोध बच्चे भी उसके पीछे–पीछे घूमने लगे। बकरी को दया आई उसने अपने बच्चों के साथ उन शेर के बच्चों को भी जैसे–तैसे पालना प्रारंभ कर दिया। एक दिन उनका एक शेर से सामना हुआ। शेर को आश्चर्य हुआ, शेर के बच्चे मेमनों के साथ ? शेर का पेट भरा हुआ था उसे शिकार तो करना न था। बस उसने वैसे ही एक दहाड़ लगाई। बकरी भागने लगी, उसके बच्चे भी भागने लगे, शेर के बच्चे समझ न पाए कि भागना क्यों है ? वे शेर को देखने लगे।

शेर ने पास आकर पूछा– ''तुम बकरी के बच्चों के साथ क्या कर रहे हो ? तुम्हारी माँ कहाँ है ?''

बच्चों ने भागती हुई बकरी को बताते हुए कहा– ''वह ही हमारी माँ।''

शेर ने कहा– ''अच्छा ! उसके बच्चों जैसी मैंऽऽ, मैंऽऽ की आवाज निकालो।''

बच्चों ने कहा– ''वैसी आवाज तो हमारे मुँह से नहीं निकलती।''

शेर उन्हें पानी के पास ले गया, कहा– ''देखो, तुम वैसे दिखते भी नहीं हो।''

''अरे हाँऽऽ हम तो आपके जैसे दिखते हैं। आप कौन हो ?'' बच्चे बोले।

शेर ने कहा– ''मैं शेर हूँ। तुम भी शेर के बच्चे हो। देखो मेरी तरह दहाड़ो।'' शेर ने दहाड़ लगाई, बच्चों को मजा आया एक दो बार कोशिश की तो वे भी दहाड़ने लगे। अब वे पहचान गए थे कि वे कौन थे।''

कहानी समाप्त कर हरीश जी ने कहा– ''हम हिन्दू भी उन शेर के बच्चों जैसे हैं। परतंत्रता में अपना स्वरूप भूल चुके थे, क्रांतिकारियों ने जगाया, महापुरुषों ने बताया, संघ पूरे हिन्दू समाज को समझाना चाहता है तुम शेर हो मेमने नहीं ? जब तक हमको स्वयं का बोध न होगा हम कैसे दहाड़ेंगे ? अच्छा बताओ डॉक्टर जी का चित्र देखा है न ? उनके हाथ में जो छड़ी है उस पर क्या लिखा था ?'' केवल एक बाल स्वयंसेवक ने हाथ उठाया। ''हाँऽऽऽ हाँऽऽऽ बताइए।'' हरीश जी बोले। उसने बताया ''स्वयमेव मृगेन्द्रता।'' हरीश जी बोले– ''मृगेन्द्रता यानी शेरपन, सिंहत्व, यह हम में है ही। बस हमें इसका बोध होना चाहिए।''

सीटी के संकेत पर सबने पंक्तिबद्ध होकर प्रार्थना की। शाखा विकिर हुई। शाखा विकिर के बाद मुख्यशिक्षक की आज्ञा पर सब मंडल बनाकर खड़े हो गए। सबने अपना–अपना परिचय दिया। नए स्वयंसेवकों को प्रतिदिन शाखा आने का आग्रह किया गया। मुख्य शिक्षक श्यामजी ने कहा– ''मैं तुम्हें बुलाने आ सकता हूँ जिससे तुम भूल न जाओ।''

शाखा यानी नित्य साधना

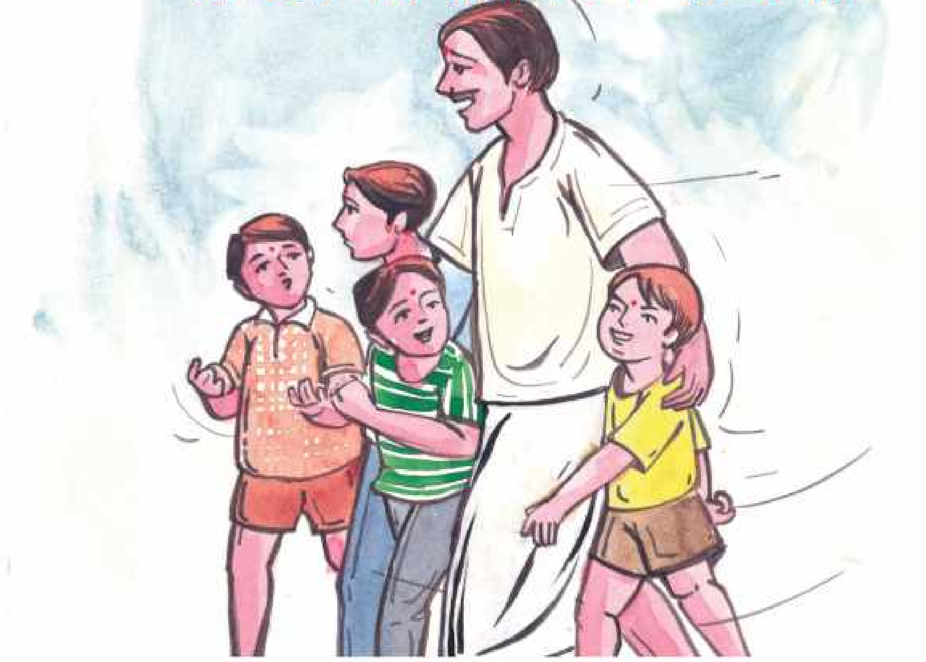

रास्ते में हरीश जी ने समझाया– ''नित्य शाखा जाने से जीवन अनुशासित होता है। अपने देश, संस्कृति, समाज सबके बारे में सही–सही जानकारी मिलती है और शरीर, मन, बुद्धि सब स्वस्थ रहते हैं। साहस, शिष्टता, सेवा के संस्कार आते हैं। नए मित्र मिलते हैं। साथ–साथ काम करने का स्वभाव व जिम्मेदारी का भाव आता है। संकोच नहीं रहता।''

गोविन्द ने पूछा– ''शाखा अच्छी है, पर रोज–रोज क्यों जाना ?''

हरीश जी ने बताया– ''जैसे भोजन नित्य करना होता है। नहीं तो शरीर कमजोर हो जाएगा। पढ़ना हर दिन होता है जिससे सब याद रहे, परीक्षा में ठीक से लिख सकें। बर्तन रोज साफ करने पर चमचमाता है नहीं तो मैला दिखने लगता है। वैसे ही अपने देश का समाज का कोई भी काम करने के लिए हमारी मन की, बुद्धि की ओर शरीर की भी प्रत्येक समय तैयारी रहे इसलिए शाखा नित्य लगाई जाती है। तुमने देखा होगा। कई बार प्राकृतिक आपदा, दुर्घटना या कोई उपद्रव होने पर संघ के स्वयंसेवक सबसे पहले पहुँचते हैं। सेवा, सहायता, शांति के लिए, निर्बलों को निर्भय बनाने के लिए। यह कैसे हो जाता है ? यह होता है शाखा पर होने वाले कार्यक्रमों के अभ्यास से।''

''संघ का यह भी काम है क्या ?'' सुधीर ने पूछा।

''संघ का यह ही काम है। समाज को जागरूक बनाना, उसमें आने वाली बुराइयों को दूर करने की प्रेरणा देने, अपने देशधर्म पर आने वाले सब प्रकार के संकटों से सामना करने के लिए समाज को तैयार करना ही संघ कार्य है। समाज के सहयोग से ही समाज को स्वाभिमान से खड़ा करना और नागरिकों के जीवन में राष्ट्रहित सबसे पहले यह भावना जगाना ही संघ कार्य है। शाखा उसी के प्रतिदिन अभ्यास का केन्द्र है।''

बच्चों ने निश्चय किया अब वे प्रतिदिन शाखा जाएँगे।

सुधीर अपने घर चला गया, बाकी बच्चे हरीश जी के साथ अपने घर आ गए।

शाखा जाने का निश्चय

रात्रि को भोजन के समय प्रतिदिन के नियम के अनुसार पूरा परिवार एकत्र था। बच्चों ने आज का शाखा का अनुभव बहुत प्रसन्नता से बताया। दादाजी, सुधांशु जी और सुभाष जी तो जानते थे कि शाखा पर क्या होता है। यह सब परिवार की मातृशक्ति यानी महिलाओं को भी पता था लेकिन सबने बच्चों की बातें उत्सुकता से सुनीं।

हरीश जी ने बताया कि अब से राघव जी, माधव जी और गोविंद जी भी शाखा जाने का निश्चय कर चुके हैं। तो परिवार ने बहुत प्रोत्साहन भरी प्रसन्नता व्यक्त की।

राघव ने पूछा आज चर्चा में कुछ शब्द आए थे जैसे बौद्धिक, सुभाषित ये क्या हैं दादा जी ?''

''शाखा में जाते-जाते सब समझ में आने लगेगा फिर भी पूछा है इसलिए थोड़ा बताता हूँ। संघ में जब किसी विषय पर विस्तार से समझाया जाता है, वक्ता उस विषय पर ही केन्द्रित सिद्धांत, तर्क, उदाहरण आदि से इस प्रकार विषय रखता है कि बिना पूछे भी स्वाभाविक रूप से मन में उठने वाली अधिकांश जिज्ञासाओं का उत्तर भी मिलता जाता है तब उसे **बौद्धिक** कहते हैं। बिना बीच में टोकते हुए सब स्वयंसेवक इसे ध्यान से सुनते-समझते हैं यह बौद्धिक होता है।''

''और सुभाषित ?'' गोविन्द ने पूछा।

''अरे! यह तो तुम्हारी पुस्तक में भी होते हैं भाई! कोई संस्कृत श्लोक, दोहा, कविता की दो-चार ऐसी पंक्तियाँ जिनमें कोई बहुत अच्छी बात कही गई हो और उन पंक्तियों में ही पूरी हो रही हो, उसे सुभाषित कहते हैं। सब स्वयंसेवकों को याद होने तक इसे प्रतिदिन प्रार्थना के पहले दुहराया जाता है।'' दादा जी को लगा गोविन्द अभी भी पूरी तरह समझ न पाया है तब उन्होंने उदाहरण दिया- ''जैसे-

वनानि दहतो वह्ने सखा भवति मारुत:।, स एव दीप नाशाय कृशे कस्यास्ति सौहृदम्।।

या इसे ही मातृभाषा में कहा जा सकता है,

सबै सहायक सबल के, निबल न कोउ सहाय।

पवन बढ़ावत आग को, दीपहिं देत बुझाय।।

ये पंक्तियाँ एक सुभाषित है। इसे दुहरवाकर इसका अर्थ भी कह दिया जाता है। जैसे इसका अर्थ है....''

राघव बोला- ''यह मेरी पुस्तक में भी है मैं बताऊँ इसका अर्थ ?''

दादाजी बोले- ''कहो-कहो भाई तुम ही कहो।'' ''जो हवा जंगल में आग लगने पर उसे और बढ़ाती है, वही दीपक को बुझा देती है। निर्बलों का संसार में कोई सहायक नहीं होता।'' राघव ने बताया। ''बिल्कुल ठीक। अब इस सुभाषित से हम क्या समझे ?'' दादाजी के इस प्रश्न का उत्तर माधव ने दिया- ''यही कि हमें शक्तिशाली बनना चाहिए।''

दादाजी ने बताया- ''इसी प्रकार बौद्धिक के पहले या शाखा में अमृतवचन कहने की भी पद्धति है। अमृत वचन किसी महापुरुष के वे कुछ वाक्य होते हैं जो बौद्धिक के विषय से संबंधित चुने जाते हैं। इन्हें कहते समय उस महापुरुष का नाम भी बताया जाता है।''

रात हो रही थी सब परस्पर राम-राम कहते सोने चले गए।

शरदोत्सव के माध्यम से

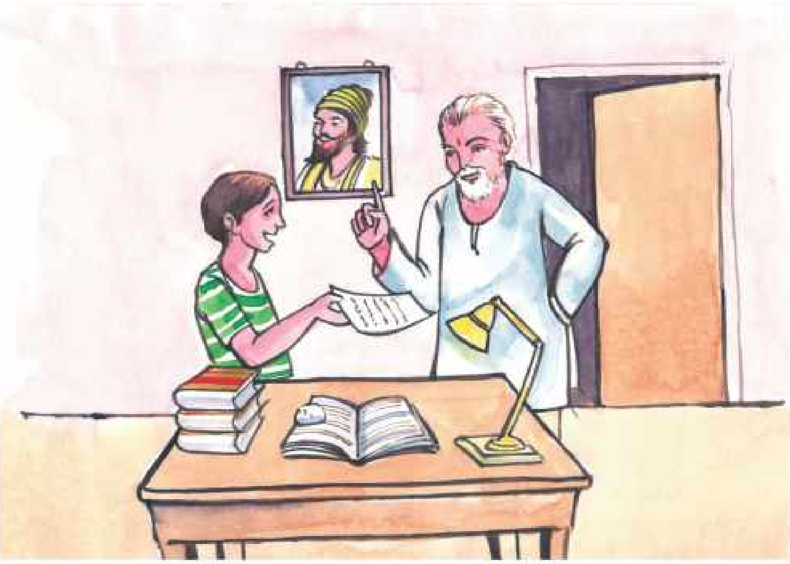

विजयादशमी के पाँच दिन बाद शरद पूर्णिमा आई। उस दिन बच्चे प्राय: उठे तो देखा दादा जी के कमरे की मेज पर एक कागज रखा है उस पर लिखा था।– 'वाल्मीकि शाखा का शरदपूर्णिमा उत्सव रात्रि आठ बजे, राम मंदिर प्रांगण उसमें दिनांक आदि के साथ एक सूचना और थी व्यवस्था शुल्क २० रुपए अपने गटनायक के पास जमा करना है।''

राघव ने पढ़ा तो उसे थोड़ा अटपटा लगा। दादा जी ने उसके भाव समझ लिए, बोले– ''शाखा का कार्यक्रम है, समाज के कुछ और भी लोग बुलाए हैं स्वयंसेवक तो रहेंगे ही। हम सब भी चलेंगे। कुछ चर्चाएँ होंगी। दूधपान का आयोजन भी रहेगा।''

''वह तो ठीक है पर यह बीस रुपए?'' राघव को लगा, दस–बीस रुपए इकट्ठे करना अच्छा लगता है क्या?

दादाजी ने समझाया– ''देखो राघव! यह तो तुम जान ही चुके हो कि संघ एक स्वयंसेवी संगठन है। यह समाज के सहयोग से ही चलता है, किसी के दान, अनुदान या शुल्क से नहीं। किसी भी संगठन को चलाने में कितनी भी मात्रा में हो पर धन की आवश्यकता तो होती ही है। यद्यपि संघ के आयोजन बहुत सादगी और कम खर्च में हों यह ध्यान रखा जाता है, फिर भी जो व्यय होता है उसे दो प्रकार से पूरा करते हैं। पहला है गुरु दक्षिणा, जो वर्ष में एक ही बार होती है, निर्धारित तिथि को गुरु पूर्णिमा पर हम सब स्वयंसेवक अपने गुरु के रूप में भगवा ध्वज का पूजन करते हैं और अपनी–अपनी क्षमतानुसार धनराशि अर्पित करते हैं। यह गुरुदक्षिणा कहलाती है।'' राघव ने कुछ पूछने को मुँह खोला तो दादा जी ने हाथ के संकेत से रोकते हुए कहा– '' विस्तार से सबके साथ बैठकर बताना ठीक रहेगा अब तुम सब स्वयंसेवक बन गए हो तो यह जानना महत्वपूर्ण है लेकिन अभी इतना समझ लो कि यह एक प्रकार संघ की आंतरिक और नियमित व्यवस्था हेतु स्वयंसेवकों का समर्पण है लेकिन समाज को संगठित और जागरूक बनाने के लिए कई बार छोटे–बड़े अन्य आयोजन भी संघ के स्वयंसेवकों को करना आवश्यक लगता है। तब उस आयोजन की आवश्यकतानुसार शुल्क व सहयोग एकत्र कर उसी निमित्त व्यय करते हैं।

यह सब बहुत प्रामाणिकता से, सोच–विचार कर और योजनापूर्वक होता है। इस प्रकार सब का सहयोग समाज में उस आयोजन के प्रति अपने पन और सहभागिता का माध्यम तो है ही और संगठन के स्वाभिमान का भी प्रकटीकरण है। आज का आयोजन भी ऐसा ही है। सब साथ बैठकर दुग्धपान के साथ चर्चा करेंगे, पर इसका खर्च कोई एक उठाएगा तो उसमें अहंकार आ सकता है। लेकिन सब मिलकर उठा रहे हैं तो सब स्वाभिमानपूर्ण समानता अनुभव करते हैं। समझे?'' राघव संतुष्ट था।

संघ का गुरु पूर्णिमा उत्सव

शरदपूर्णिमा के आयोजन में सचमुच बहुत आनंद आया, बच्चे पहली बार गए थे इसलिए उनको यह नया अनुभव बहुत भाया। लौटते समय गोविन्द सुधांशु जी से बोला– ''पिताजी! यह हमारे संघ का खास उत्सव है। है न?''

सुधांशु जी ने समझाया– ''वैसे तो हिन्दू समाज का हर उत्सव हमारा ही उत्सव है लेकिन संघ में उनमें से छः उत्सव निश्चित किए हैं जो संघ के द्वारा विशेषरूप से मनाए जाने से संघ के उत्सवों के रूप में भी प्रसिद्ध हो गए। वैसे ये सब परंपरागत हिन्दू उत्सव हैं।''

''अच्छा! संघ के उत्सव भी हैं!! कौन से हैं वे उत्सव?'' सुधीर ने पूछ लिया।

''संघ का पहला उत्सव है गुरु पूर्णिमा है। आषाढ़मास की पूर्णिमा को यह उत्सव पूरा हिन्दू समाज अपने–अपने प्रकार से अपने गुरुओं की पूजा करके मनाता है। लेकिन संघ में तो भगवा ध्वज ही हमारा गुरु है इसलिए सब स्वयंसेवक इस दिन भगवा ध्वज का पूजन करके उसके समक्ष गुरु दक्षिणा समर्पित करते हैं।''

''दादाजी बता रहे थे आज मुझे गुरु दक्षिणा के संबंध में पर आप और कुछ भी बताइए।'' राघव ने बताया।

''गुरु दक्षिणा यानी संघ की वर्षभर की नियमित आवश्यकताओं, जैसे संघ कार्यालयों की व्यवस्थाओं, संघ के प्रचारकों के प्रवास आदि के व्यय आदि के लिए प्रत्येक स्वयंसेवक गुरु रूप भगवा ध्वज के सामने अपने खर्चों से आवश्यक रूप से धनराशि बचाकर दक्षिणा स्वरूप समर्पित करते हैं। यह दान नहीं, चंदा नहीं, न ही शुल्क है। केवल संघ के प्रति हमारे श्रद्धाभाव के प्रकटीकरण का एक प्रकार है। स्वयंसेवकों का प्रयत्न रहता है कि यह समर्पण राशि अधिक–से–अधिक बढ़ती रहे। यह दबाव नहीं होता, अनिवार्य नहीं है पर कोई भी स्वयंसेवक इस अवसर को चूकना नहीं चाहता। ऐसा संघ का पहला उत्सव है गुरु पूर्णिमा।''

रक्षाबंधन, विजयादशमी, मकर संक्रांति

''संघ का दूसरा उत्सव गुरु पूर्णिमा के एक माह बाद श्रावणमास की पूर्णिमा को आता है। वह है रक्षाबंधन। रक्षाबंधन को सामान्यत: भाई–बहन का त्योहार मान लिया जाता है। लेकिन हमारे शास्त्रों में रक्षाबंधन का अर्थ रक्षा करने का वचन है जिसका स्मरण दिलाने के लिए प्रतीक रूप रक्षासूत्र यानी राखी बाँधी जाती है। संपूर्ण हिन्दू समाज एक दूसरे की रक्षा का कर्त्तव्य समझे और उसे वचनबद्ध होकर निर्वाह करे इसलिए संघ में स्वयंसेवक परस्पर और सेवा बस्तियों आदि में जाकर रक्षाबंधन करते हैं।'' ''अरे वाह! और इसके बाद कौन–सा उत्सव आता है?'' माधव जानने को उत्सुक था। ''तीसरे उत्सव के संबंध में तुम लोगों को पहले ही जानकारी हो चुकी है। यह आता है आश्विन माह के शुक्ल पक्ष की दशमी को यानी अधर्म पर धर्म की विजय का पर्व दशहरा। स्वयंसेवकों के लिए यह विशेष महत्व इसलिए भी रखता है कि इसी दिन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना हुई थी। यह दिन समाज में संगठन शक्ति के जागरण का भी पर्व है। इसलिए हम इस दिन संघ में शस्त्र पूजा करते हैं और पथसंचलन निकालते हैं।

प्रमुख उत्सव नागपुर में होता है जिसमें पूजनीय सरसंघचालक जी का बौद्धिक सुनने के लिए संघ ही नहीं लगभग संपूर्ण विश्व के लोगों में विशेष प्रतीक्षा रहती है। जो नागपुर में नहीं होते वे संचार माध्यमों से इसे सुनते, पढ़ते, समझते हैं। समाज में प्रकट रूप में मनाया जाने वाला यह सबसे सुपरिचित उत्सव है। स्वयंसेवकों द्वारा इसकी तैयारी कई दिनों पहले से की जाती है। नए स्वयंसेवकों के गणवेश बनाना, संचलन का अभ्यास आदि कई दिनों पूर्ण योजना बनाकर आरंभ होते हैं।

इसके बाद आता है चौथा उत्सव जो सूर्य के उत्तरायण से संबंधित है। लगभग चौदह–पंद्रह जनवरी को माघ मास में जब आकाश मंडल में सूर्य मकर राशि में संक्रमण कर उत्तरायण में गति करते हैं तब मकर संक्रांति का उत्सव मनाया जाता है। यह पितामह भीष्म का निर्वाण दिवस भी है इसलिए अपने संकल्प को भीष्म की भाँति प्रतिज्ञाबद्ध होकर पूर्ण करने की प्रेरणा देने वाले इस पर्व पर सूर्य–नमस्कार महायज्ञ यानी अधिक से अधिक सूर्य–नमस्कार लगाने और दण्डप्रहार लगाने जैसी स्वास्थ्य व बलवर्धक योजनाएँ बनाई जाती हैं। इसदिन तिल–गुड़ का प्रसाद वितरण किया जाता है जो पौष्टिक तो होता ही है तिल–तिल रूप में बिखरी समाज शक्ति को गुड़ जैसी स्नेहभाव की मधुरता से संगठित करने के भाव को प्रकट करता है। तो यह हुआ हमारा चौथा उत्सव।

हिन्दू नव-वर्ष और हिन्दू साम्राज्य दिवस

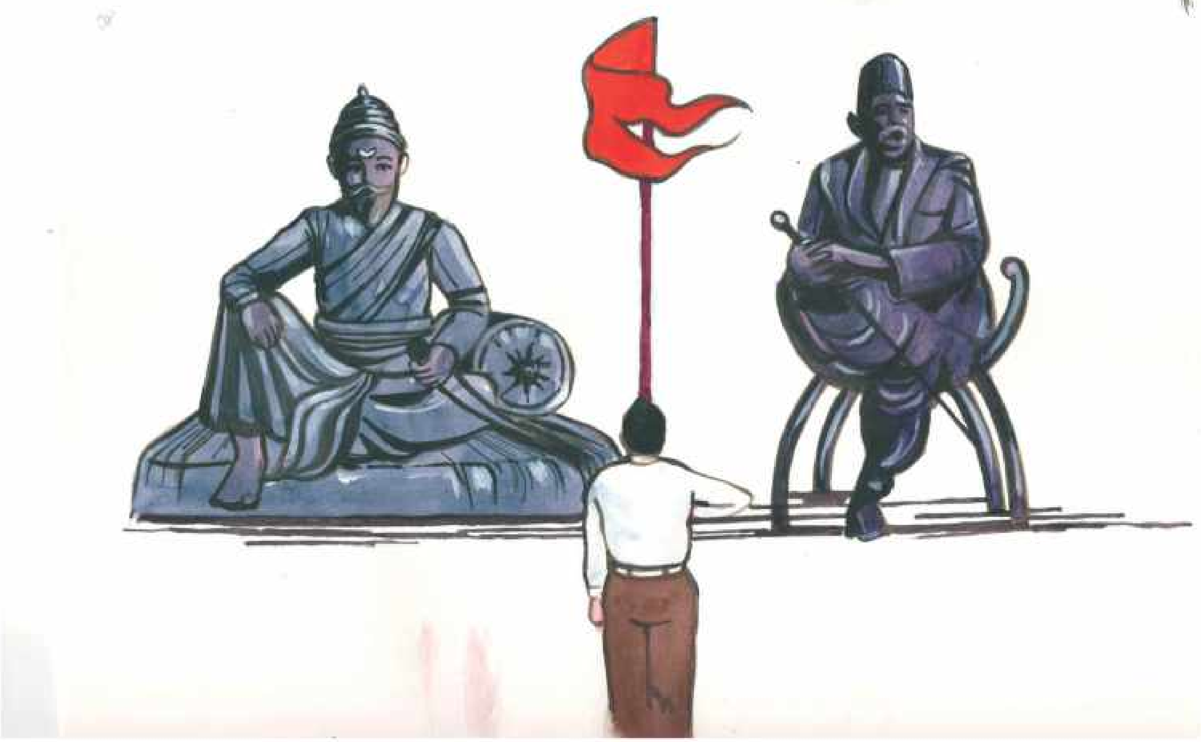

संघ का पाँचवा उत्सव है वर्ष प्रतिपदा। चैत्र माह के शुक्ल पक्ष की पहली तिथि को मनाया जाने वाला यह उत्सव एक अर्थ में संसार का पहला उत्सव है। इसी दिन से सृष्टि का निर्माण आरंभ हुआ था। वासंतिक नवरात्र के आरंभ, भगवान श्रीराम के व धर्मराज युधिष्ठिर के राज्यारोहण तथा युगाब्द व नव संवत्सर के आरंभ का यह दिन विक्रम संवत् के आरंभ का भी दिन होने से हिन्दू नव वर्ष के रूप में मनाया जाता है।

स्वयंसेवकों के लिए विशेष बात यह कि संयोग से यह संघ संस्थापक डॉक्टर हेडगेवार जी का जन्मदिन भी है। इसलिए केवल इस एक दिन शाखाओं पर ध्वज लगने के पहले ही 'आद्य सरसंघचालक प्रणाम' होता है।

वर्ष के अंतिम उत्सव के रूप में ज्येष्ठ शुक्ल त्रयोदशी को हिन्दू साम्राज्य दिनोत्सव मनाते हैं। यह मुगलों को चुनौती देते हुए हिन्दू पदपादशाही यानी हिन्दू स्वराज्य की पुन: स्थापना का दिन है। छत्रपति शिवाजी महाराज के अतुलनीय पराक्रम से शताब्दियों परतंत्रता का कष्ट सहते भारतीयजनों को 'हिन्दू भी पुन: राजा हो सकता है।' का आत्मविश्वास जगाकर प्रत्यक्ष कर दिखाने से हिन्दू शौर्य के दिन के रूप में यह उत्सव मनाया जाता है।''

इन छ: उत्सवों के अतिरिक्त भी होली मिलन, दीपावली मिलन, शरदोत्सव, वनसंचार आदि के माध्यम से स्वयंसेवक समाज को एकत्र व जागरित करते रहते हैं।

परमपूजनीय डॉक्टर जी व श्री गुरुजी

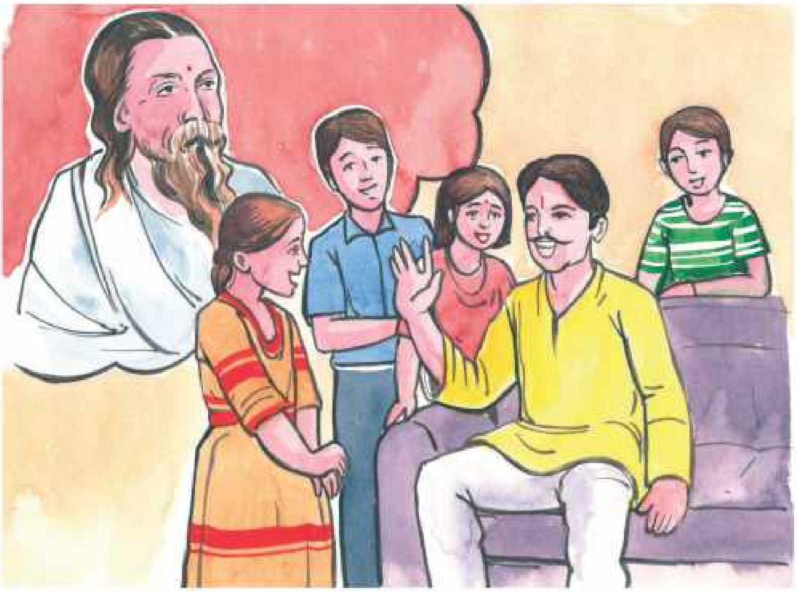

''आपने कहा आद्य सरसंघचालक, पहले सरसंघचालक यानी डॉक्टर केशवराव बलिराम हेडगेवार जी, तो क्या बाद में और कोई भी सरसंघचालक बने?'' माधव ने पूछा।

सुधांशु जी ने कहा- ''पिताजी अधिक अच्छे से बताएँगे। घर चलो बढ़िया चाँदनी खिली हुई है आँगन में बैठकर बात करेंगे।''

सबकी सभा आँगन में जम गई। घर की महिलाएँ और चंद्रिका व सुधा भी वहीं आ गईं। दादा जी ने बताना आरंभ किया- ''पहले सरसंघचालक डॉक्टर केशवराव बलिराम हेडगेवार थे। वे १० नवम्बर १९२९ को सरसंघचालक घोषित किए गए। कोलकाता से डॉक्टरी की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। घर की आर्थिक स्थिति बिल्कुल ठीक नहीं थी पर राष्ट्र सेवा का व्रत लेकर आजीवन विवाह नहीं किया। अपने पेट भरने हेतु आजीविका की चिंता न कर आजीवन हिन्दू संगठन हेतु समर्पित रहे। निरंतर संगठन संबंधित कार्य करते हुए उनका शरीर बहुत रोगी हो गया, पर २१ जून १९४० को देह छोड़ने के पूर्व वे संघ का बीजारोपण प्रत्येक प्रांत में देख चुके थे।''

देहावसान के पूर्व ही सहयोगियों से विचार-विमर्श कर वे अपना संघ कार्य के उत्तराधिकारी अर्थात् अगले सरसंघचालक के रूप में श्री. माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर जी को निश्चित कर गए थे। डॉक्टर साहब की तेरहवीं के दिन ३ जुलाई १९४० को श्री. माधवराव जी हमारे द्वितीय सरसंघचालक बने। वे बहुत उच्चकोटि के विद्वान और आध्यात्मिक पुरुष थे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पढ़ते समय अन्य छात्रों की पढ़ने-समझने में सहायता करते थे इसलिए संघ में आने से पहले ही सब उन्हें गुरुजी कहने लगे थे। बाद में स्वयंसेवक भी उन्हें 'श्री गुरुजी' ही कहने लगे।

संघ के उत्सवों में या स्वयंसेवकों के घरों में टोपी लगाए डॉक्टर जी का चित्र सब पहचानते हो। दूसरा चित्र जिसमें एक लंबी दाढ़ी वाले तपस्वी दिखाई देते हैं वे ही हैं श्री गुरुजी। श्री गुरुजी के समय संघ का विस्तार बड़ी तेजी से हुआ पर बड़े संकट भी आए। १९४७ में हमारा देश विभाजित होकर स्वतंत्र हुआ, फिर महात्मा गाँधी की हत्या का न किया पाप भी संघ के माथे मढ़ दिया गया। संघ पर प्रतिबंध लगा दिया गया। गुरुजी ने अद्भुत संगठन क्षमता से इन परिस्थितियों से संघर्ष किया। पूरे वर्ष संपूर्ण भारत में प्रवास करते हुए जैसे रेल का डिब्बा ही उनका घर है ऐसा प्रतीत होता था। संघ की प्रेरणा से स्वयंसेवकों ने शिक्षा, श्रमिक, राजनीति, धर्म, कला-संस्कृति आदि अनेक क्षेत्रों में प्रभावी संगठन खड़े किए। वे ३३ वर्षों तक सरसंघचालक रहते हुए ५ जून १९७३ को दिवंगत हुए।

हमारी सरसंघचालक परंपरा

श्री. गुरुजी के देहत्याग के पश्चात् श्री. मधुकर दत्तात्रेय देवरस जिन्हें सब बालासाहेब के नाम से जानते थे, श्री. गुरुजी के अंतिम पत्र में व्यक्त व्यवस्था के अनुसार तीसरे सरसंघचालक बने। बी. ए. एल. एल. बी. की शिक्षा प्राप्त बालासाहेब बाल्यकाल से ही स्वयंसेवक बन चुके थे। तथापि देशभर में फैल चुके संघ रूपी संगठन को सम्हाल पाना कठिन चुनौती थी। तिस पर २५-२६ जुलाई १९७५ को लोकतंत्र की हत्या जैसा निर्णय लेकर तत्कालीन प्रधानमंत्री ने देश में आपातकाल लगवा दिया। ४ जुलाई को संघ पर प्रतिबंध लगा दिया। बालासाहेब ने अद्भुत धैर्य और सूझबूझ से यह चुनौती स्वीकार की। वे २१ वर्ष सरसंघचालक रहे। बालासाहेब ने अंतिम वर्षों में अस्वस्थता बहुत बढ़ जाने पर १९९४ में स्वयं अपना सरसंघचालक का गरिमामय दायित्व प्रोफेसर राजेन्द्र सिंह जी यानी रज्जू भैया को सौंप दिया। विश्व चकित था इतना बड़ा दायित्व इतनी सहजता से अपने सहयोगी को सौंप देना यह संघ के संस्कारों से ही संभव है।

प्रोफेसर राजेन्द्र सिंह जी अपने समय के जाने-माने भौतिक विज्ञानी थे। बहुत सफल शिक्षक थे। ११ मार्च १९९४ को वे संघ के चौथे सरसंघचालक बनाए गए। असाधारण प्रतिभाशाली श्री रज्जू भैया १० मार्च २००० तक सरसंघचालक के रूप में स्वयंसेवकों के मित्र, चिंतक और मार्गदर्शक की भूमिका में रहे। निरंतर प्रवास व चिंतन-मनन से शरीर बहुत अस्वस्थ हो जाने पर उन्होंने अपना दायित्व श्री. कुपहल्ली सीतारमैया सुदर्शन जी को सौंप दिया। अखिल भारतीय शारीरिक प्रमुख व बौद्धिक प्रमुख, सह-सरकार्यवाह आदि महत्वपूर्ण दायित्व निर्वाह कर चुके श्री. सुदर्शन जी नई सोच के धनी और इंजीनियरिंग में उच्च श्रेणी में उत्तीर्ण थे। वे बहुत अध्ययनशील, विचारक और अनेक भाषाओं के जानकार थे। वे स्पष्ट रूप से आने वाले समय में संघ के और हिन्दू समाज के सामने आने वाली नई चुनौतियों के प्रति सचेत करते रहे।

२१ मार्च २००९ में श्री. सुदर्शन जी ने अपना सरसंघचालक का दायित्व पशुचिकित्सा में उच्च शिक्षा प्राप्त, अत्यंत अनुभवी, कुशल संगठक डॉ. मोहनराव जी भागवत के समर्थ काँधों पर डाल दिया।

अब तक समाज में कार्यकर्ताओं द्वारा अनेक समविचारी संगठन सुदृढ़ता से खड़े हो चुके थे। नई सदी का भारत अपने प्रकार से बढ़ रहा है और आंतरिक व बाहरी संकटों से लड़ भी रहा है। एक सर्वसमर्थ, स्वाभिमानी, शक्ति सम्पन्न और विश्व में सम्मानित भारत के लिए हजारों-लाखों स्वयंसेवकों का मार्गदर्शन डॉक्टर मोहनराव जी भागवत कर रहे हैं।

यह है संघ की सरसंघचालक परंपरा जिसकी तुलना प्राचीन ऋषि परंपरा के अतिरिक्त किसी परंपरा से करना संभव ही नहीं है।''

मातृशक्ति के लिए

राघव, माधव और सुधीर प्रतिदिन शाखा जाने लगे। गोविन्द कभी–कभी नहीं जाता तो वे उसे प्रेम से समझाते हैं। एक दिन चंद्रिका ने राघव से पूछ लिय – ''राघव भैया! क्या राष्ट्रभक्ति केवल आप लोगों के लिए ही है, हम बहनों को शाखा में नहीं जाना चाहिए?'' राघव उत्तर सोच रहा था। संशय उसके मन में भी था तभी सुभाष काका ने उनकी बातें सुन लीं। वे समझाने लगे– ''देशभक्ति तो पुरुषों–महिलाओं सबके लिए है। हर आयु के लोगों के लिए आवश्यक है। जो संघ में नहीं आ रहे हैं उन्हें भी राष्ट्र भक्त होना ही चाहिए। वे सब भी भारतमाता की ही संतानें हैं। पुरुषों के लिए संघ है, महिलाओं यानी मातृशक्ति के लिए क्या? यह विचार तो डॉक्टर हेडगेवार जी के समय उपस्थित हो गया था। बहुत विचार–विमर्श करके संघ में ही मातृशक्ति को सम्मिलित करने की अपेक्षा संघ के मार्गदर्शन में एक वैसा ही संगठन महिलाओं के लिए बनाने का निश्चय हुआ। इससे मातृशक्ति के राष्ट्र के लिए कर्त्तव्यों, कार्यक्षेत्रों को अधिक महत्व मिलेगा, यह चिंतन था। स्वतंत्ररूप से चिंतन–मनन, कार्यक्रम, प्रशिक्षण आदि से समर्थ मातृशक्ति तैयार होगी ऐसा निश्चय हुआ।

तब २५ अक्टूबर १९३६ को वर्धा में वंदनीया लक्ष्मीबाई केलकर ने राष्ट्र सेविका समिति की स्थापना की। सरसंघचालक की भाँति इस संगठन में प्रमुख संचालिका, यह सर्वोच्च दायित्व निश्चित हुआ। जिसे सर्वप्रथम श्रद्धेय लक्ष्मीबाई केलकर जिन्हें सब वंदनीया मौसी जी कहने लगे थे, ने १९७८ तक सम्हाला। उनके बाद सरस्वती ताई आपटे १९९४ तक, उषाताई चाटी २००६ तक और प्रमिला ताई मेढे २०१२ तक क्रमश: राष्ट्र सेविका समिति की प्रमुख संचालिका रहीं।

वर्तमान में यह दायित्व वी. शांताकुमारी निर्वहन कर रही हैं। संघ की ही भाँति राष्ट्र सेविका समिति की भी शाखाएँ लगती हैं, प्रशिक्षण वर्ग और कार्यक्रम होते हैं।

हजारों स्वयंसेविकाएँ मातृशक्ति में राष्ट्रभक्ति संचारित करती हैं। इसलिए चंद्रिका हो या सुधा, संघ प्रेरणा से भारत माता की भक्ति और समाज सेवा का अवसर सबके लिए है।''

सेवा ही है धर्म हमारा

एक दिन धीरज का पूरा परिवार माता–पिता बहन व वह राघव के घर आमंत्रित थे। सबका भोजन साथ होने वाला था। सब साथ बैठे तो धीरज के पिता संदीप जी ने सुधांशु जी से पूछ लिया– ''भाईजी! क्या संघ आधुनिक युग की राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों का भी ध्यान रखता है? उसकी योजना में समसामयिक और आज की समस्याओं का हल भी सुझाता है? सुधांशु जी बोले– 'संघ का काम है ऐसे स्वयंसेवक निर्माण करना जो अपने राष्ट्र की प्रत्येक आवश्यकताओं और चुनौतियों के लिए सकारात्मक योगदान दे सकें, स्वयं कार्य करें, समाज को जागरित करें।

हमारे संगठन में कहा जाता है– 'संघ कुछ नहीं करेगा और स्वयंसेवक सब कुछ करेगा।' इसका अर्थ है देश व समाज की हर सकारात्मक आवश्यकता के लिए सेवा के लिए संघ के स्वयंसेवक हमेशा सक्रिय रहेंगे, तैयार रहेंगे, आगे बढ़कर निस्वार्थ भाव से काम करेंगे लेकिन संघ का काम बस ऐसे नागरिक तैयार करना है। समय–समय पर संघ राष्ट्रीय महत्व के सामाजिक चेतना के विषयों पर अभियान लेता है समाज जागरण करता है। राष्ट्रीय आपदाओं में, प्राकृतिक विपदाओं में सब प्रकार सेवा करता है। जैसे कोरोनाकाल में संघ स्वयंसेवकों ने अभूतपूर्व सेवा कार्य किए, विमान दुर्घटना, रेल दुर्घटना, बाढ़, अकाल, भूकंप जैसी परिस्थितियों में सबसे पहले पहुँचने की तत्परता स्वयंसेवकों की रहती है। हाँ, वे यह सब निस्वार्थ भाव से बिना दिखावे के करते हैं इसलिए प्रचार में नहीं आते और बहुत लोगों को ज्ञात नहीं होता।''

ज्योति से ज्योति जले

संदीप जी प्रभावित हुए। बोले– ''भाई जी मेरी नौकरी तो बैंक में है देश में कहीं भी स्थानांतरण होता रहता है पर क्या मैं भी संघ से जुड़ सकता हूँ?''

''क्यों नहीं? आज संघ तो सब जगह पहुँचा हुआ है। मैं आपको कुछ काम बताता हूँ जिसमें आप सरलता से सहयोग कर सकते हैं आप ही नहीं भाभी जी भी इसमें सहयोग कर सकती हैं।''

''हाँ! हाँ! बताइए न, हम अवश्य करेंगे।'' पति–पत्नी एक साथ बोले।

सुधांशु जी बताने लगे– ''संघ के कार्यकर्ताओं ने अखिल भारतीय स्तर पर पाँच संकल्प निश्चित किए हैं जिन्हें समाज के सब लोगों का सहयोग लेकर पूरा करना है। इन्हें **पंच परिवर्तन** भी कहा जा रहा है।''

''अच्छा! क्या हैं वे?'' संदीप जी ने उत्सुकता दिखाई।

सुधांशु जी बताने लगे– ''एक है **स्व का बोध**, यानी **स्वदेशी जीवन पद्धति**। हम अपने देश की, धर्म, संस्कृति, इतिहास, परंपराओं को समझते हुए अपने संसाधनों को अपनाएँ। अपनी वेशभूषा, अपनी भाषाएँ, अपने आचार–विचार, अपने पर्व–त्योहार, उनको मनाने की पद्धति, उपयोगी वस्तुएँ, उपकरण यानी हर वह वस्तु जो हमारे देश की है उसे गौरवपूर्ण ढंग से जीवन में लाएँ।

देखिए भाई साहब! संघ तो हमेशा स्वदेशी का ही आग्रह करता रहा है लेकिन अभी अमेरिका आदि से व्यापार, आयात–निर्यात की जो कठिनाई उत्पन्न हो गई है उसका एकमात्र समाधान तो स्वदेशी ही है।

दूसरा बहुत महत्वपूर्ण विषय है **परिवार प्रबोधन**। आज नव संचार साधनों मोबाइल, कम्प्यूटर टीवी आदि का प्रभाव कह लीजिए या दौड़–भाग भरी जीवन शैली। कुटुंब व्यवस्था बिखर रही है, परिवार के सदस्य ही आपस में मिलने, बात करने का समय नहीं निकालते। इसलिए संबंध ढीले हो रहे हैं। हम मशीन की तरह काम करते हैं पर शांति नहीं, शारीरिक व मानसिक बीमारियों से जूझते हुए जी रहे हैं। इसलिए संघ का आग्रह है परिवार के सदस्य कम–से–कम एक समय एक साथ भोजन करें। आपस में बातचीत करें। प्रतिदिन ईश्वर के सामने एक साथ आरती, स्तुति करने का नियम बनाएँ। कभी–कभी परिवार के साथ घूमने जाएँ। पड़ोसियों, रिश्तेदारों से मिलें–जुलें, उनके घर जाएँ उन्हें अपने घर बुलाएँ। इससे घर का वातावरण स्वस्थ और सकारात्मक बनेगा। जीवन आनंदमय बनेगा।

समाज अपना, देश हमारा

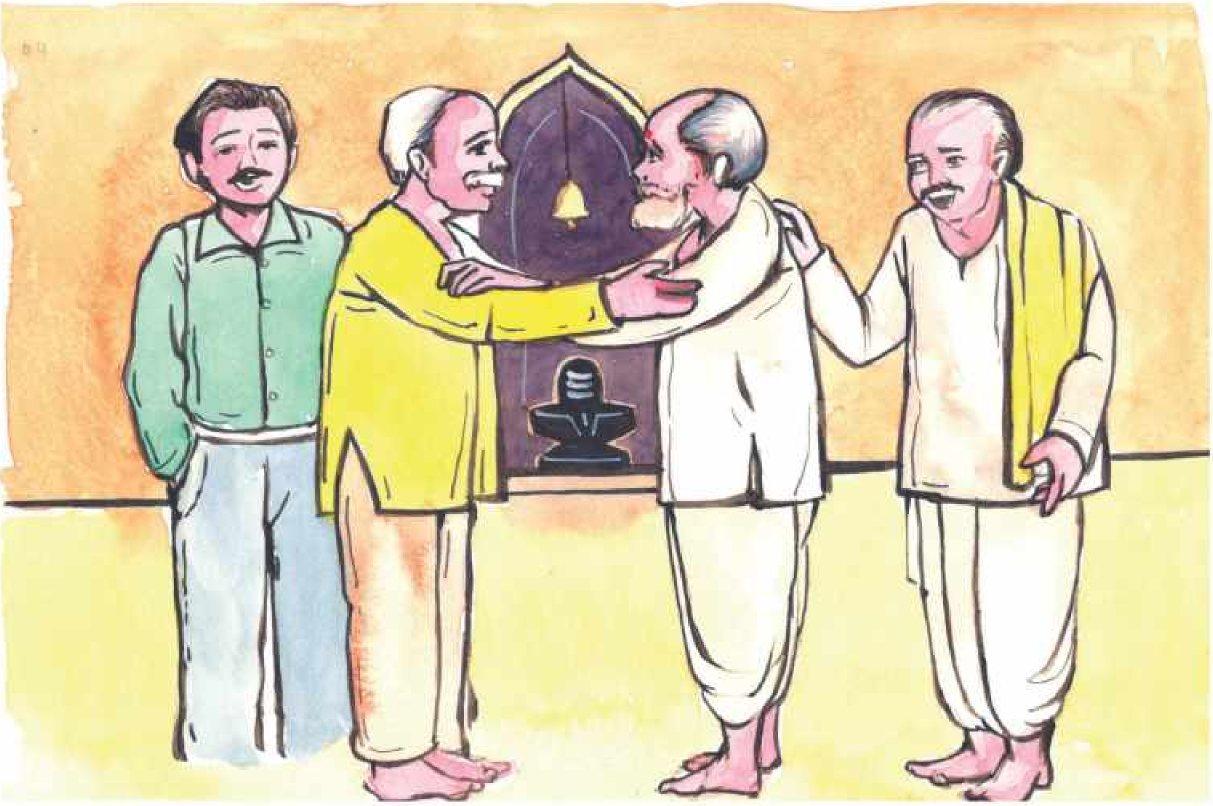

तीसरा महत्वपूर्ण काम है समाज में सच्चा अपनत्व बनाना। हम सब हिन्दू हैं, सब भारतीय हैं। हममें कोई धनवान या सामान्य होगा कुछ लोग निर्धन भी होंगे। हमारे इष्ट देव पूजा–पाठ की विधियों में अंतर हो सकता है लेकिन हम सब इस हिन्दू भूमि की संतानें हैं, सब हिन्दू हैं। जाति–पाँति जिन भी कारणों से बनी होगी, उसके विवाद करने से क्या लाभ ? आज सब जाति के लोग सब क्षेत्रों में देश की उन्नति में सहायक हैं, इसलिए समाज को सारे भेद–भाव भूलकर एक होना चाहिए। सब सबका सम्मान करें। सबसे प्रेम करें। यही **सामाजिक समरसता** है। इसका विचार और व्यवहार अपने घर से आरंभ करना होगा तब समरसता आएगी।

चौथा विषय है कि स्वतंत्रता के ८० वर्ष होने को हैं विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के सब नागरिक अपने कर्त्तव्यों का कितना पालन करते हैं? स्वयं की समीक्षा करें तो बुरा नहीं लगेगा। स्वच्छता हो या व्यवस्था, सार्वजनिक रूप से संचालित व्यवस्थाओं को सुचारू रखने में हमारी व्यक्तिगत भूमिका क्या है ? क्या हो सकती है ? यह विचार करें। सरकारें नहीं वास्तव में किसी देश के नागरिक ही उस राष्ट्र को महान बनाते हैं। सरकारें भी तो हमारे चुने हुए नागरिकों का समूह ही है। इसलिए **नागरिक कर्त्तव्यों का पालन** हमारा राष्ट्रीय धर्म है। यह समझ प्रत्येक नागरिक में उत्पन्न करना आवश्यक है।

प्रकृति सबकी माँ है

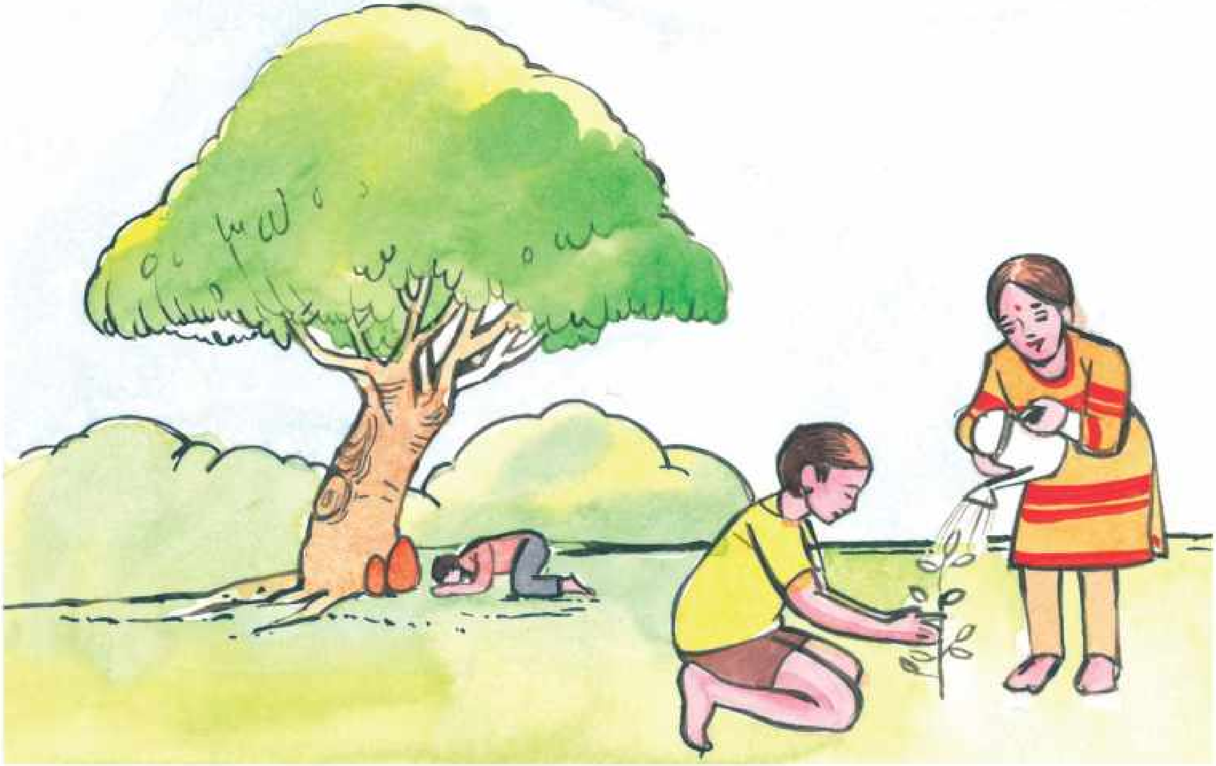

पाँचवाँ विषय है **पर्यावरण चेतना**। ''सुधांशु जी कह रहे थे। ''सच में यह तो सारे विश्व की भी चिंता का विषय है ?'' सुधीर की माताजी कांतादेवी बोलीं।

''केवल पर्यावरण नहीं ये पाँचों बातें केवल भारत नहीं विश्व के हर देश के लिए सोचने व करने योग्य हैं भाभी जी! आज ग्लेशियर समाप्त हो रहे हैं, पिघल रहे हैं, पहाड़ दरक रहे हैं, कहीं सूखा, कहीं बाढ़ें हम सोचते हैं इस सबमें हम क्या कर सकते हैं ? हमारी छोटी–मोटी लापरवाहियों से ही पर्यावरण की यह भयानक दुर्दशा है। हरियाली बचाना, हरियाली बढ़ाना, घातक प्लास्टिक व रासायिनक कचरा न बढ़ने देना, फैलने देना न बनने देना, वायु शुद्ध रहे इसलिए ए. सी., फ्रीज से निकलने वाली गैसों का खतरा कम–से–कम करना, वाहनों से होने वाला प्रदूषण कम करने का प्रयास, ऊर्जा, जल, ईंधन, वनसंपदा का संतुलित प्रयोग। भाई! ये सावधानियाँ ये उपाय, ये चिंता तो हर नागरिक कर सकता है। प्रकृति को माँ मानने वाले हम लोग इस माँ के कष्टों के कारण बनेंगे तो सपूत तो नहीं कहलाएँगे। इस विषयों पर घर–परिवार, गली–मोहल्लों और अपने आसपास जागरूकता लाना और छोटे–छोटे प्रयोग करना यह संघ की सब नागरिकों से अपेक्षा है। आप हम जहाँ भी रहें यह कर सकते हैं। आज की परिस्थितियों में यह भारतमाता की सबसे बड़ी और आवश्यक सेवा है।''

राष्ट्राय स्वाहा

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ राष्ट्र आराधना का महान अनुष्ठान है। राष्ट्र देवता की सतत् आराधना है। वह आराधना जिसके लिए गंध, अक्षत, फूल, धूप, दीप, नैवेद्य नहीं चाहिए। केवल और केवल भारतमाता के प्रति अगाध, अटल भक्ति, अपने राष्ट्र की परंपराओं में अटूट निष्ठा, तन, मन, जीवन में सब प्रकार समाया स्वदेशाभिमान चाहिए। इसमें कोई असमर्थ नहीं, कोई अयोग्य नहीं, सबके लिए काम है कर्त्तव्य है, और सबकी सार्थकता है। बस मन में एक ही भाव गूँजता रहे–

तन समर्पित मन समर्पित और यह जीवन समर्पित
चाहता हूँ देश की धरती, तुझे कुछ और भी दूँ।।

संदीप जी विदा लेते–लेते पूछ रहे थे– ''भाई साहब! संघ का गणवेश कहाँ मिल जाएगा?''

उत्तर राघव ने दिया– ''मेरे झोले में भी रहता है आज ही ले सकते हैं।'' एक मुक्त हास्य के साथ सब विदा हुए।

यह एक परिवार की गाथा नहीं, विश्व में असंख्य परिवारों में राष्ट्रीयता का यह अनुष्ठान पीढ़ी–दर–पीढ़ी चल रहा है। हिन्दू समाज संगठित होकर **'राष्ट्राय स्वाहा इदं न मम'** मंत्र के साथ आहुति डाल रहा है। एक ही फल की प्राप्ति के लिए जो है **'भारत माता की जय।'**

परम पूजनीय सरसंघचालक जी

डॉ. केशवराव बलिराम हेडगेवार

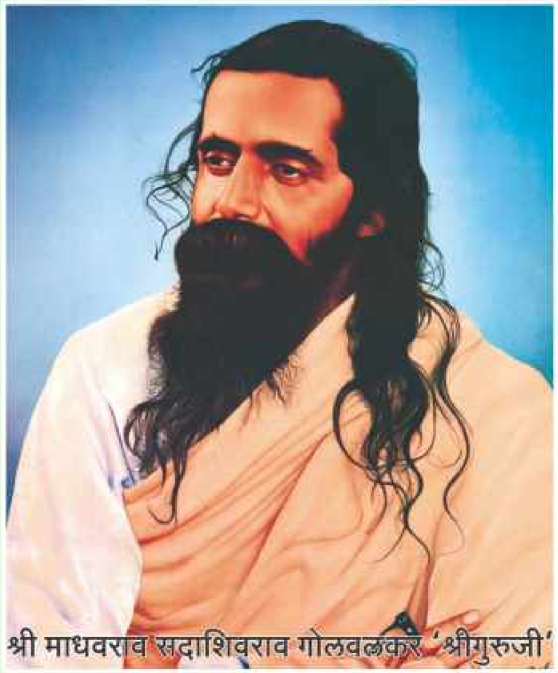

श्री माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर 'श्रीगुरुजी'

श्री मधुकर दत्तात्रेय देवरस 'बालासाहब'

प्रो. राजेन्द्र सिंह 'रज्जू भैया'

श्री कुप्पहल्ली सीतारमैया सुदर्शन

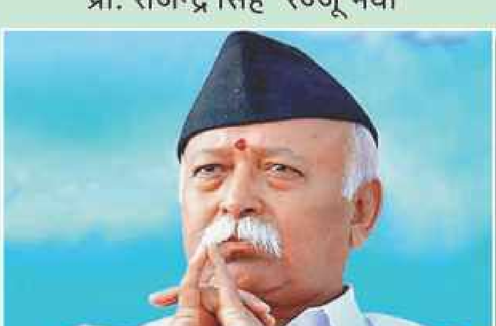

डॉ. मोहनराव मधुकरराव भागवत

डाक पंजीयन : एम.पी./आय.डी.सी./६२३/२०२४-२०२६ आर.एन.आय. पं. क्रं. ३८५७७/८५
प्रकाशन तिथि २०/११/२०२५ प्रेषण तिथि ३०/११/२०२५ प्रेषण स्थल- आर.एम.एस., इन्दौर

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के आद्य सरसंघचालक डॉ. केशवराव बलिराम हेडगेवार का स्मृति मंदिर, रेशिम बाग, नागपुर (महाराष्ट्र)

**हिन्दुराष्ट्र संघटकं सुजन वन्दनीयम्।
केशवं स्मरामि सदा परम पूजनीयम्।।**

स्वामी सरस्वती बाल कल्याण न्यास, इन्दौर, म. प्र. के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक राकेश भावसार द्वारा अजीत प्रिन्टर्स एंड पब्लिशर्स, २०-२१, प्रेस कॉम्प्लेक्स, ए. बी. रोड, इन्दौर, म. प्र. से मुद्रित एवं ४०, संवाद नगर, नवलखा, इन्दौर, म. प्र. से प्रकाशित सम्पादक - गोपाल माहेश्वरी